# पञ्चतन्त्रम्

## (अपरीक्षितकारकम्)

पञ्चतन्त्र का विग्रह है- पञ्चानां तन्त्राणां समाहारः अर्थात् जहां पर पाँच तन्त्रों का समाहार है। पञ्चतन्त्र अर्थात्

1. मित्र भेद
2. मित्र सम्प्राप्ति
3. काकोलूकीय
4. लब्धप्रणाश
5. अपरीक्षितकारक

इनके वर्ण्य विषयों का आभास इनके नामों से ही व्यक्त हो जाता है।

संस्कृत में आख्यान साहित्य का एक विशिष्ट स्थान है। आख्यान साहित्य के प्रमुख रूप से दो विभाग है- नीतिकथाएँ तथा लोककथाएँ। नीतिकथाओं में उपदेशप्रद विषयों की प्रधानता रहती है। धर्म, अर्थ एवं काम सम्बन्धी विषयों के साथ-साथ सदाचार, राजनीतिक तथा व्यवहारिक ज्ञान को इन कथाओं में अत्यन्त रोचक ढंग से उपस्थित किया जाता है। इन कथाओं में गद्य एवं पद्य दोनों का समावेश हुआ है।

पञ्चतन्त्र के अनुशीलन से नीतिशास्त्र विषयक ज्ञान आसानी से हो जाता है। क्योंकि इसका एक मात्र उद्देश्य ही सुकुमारमति राजकुमारों को कथा के माध्यम से व्यवहारिक व राजनीतिक ज्ञान कराना है।

पञ्चतन्त्र के लेखक के रूप में सभी संस्करणों में विष्णुशर्मा का नाम अवश्य उपलब्ध होता है। विष्णुशर्मा के परिचय के विषय में पञ्चतन्त्र के कथामुख से यह प्रतीत होता है कि वे दक्षिण देश के महिलारोप्य नामक नगर के राजा के राज्य में रहते थे, लेकिन यह एक कल्पना मात्र कही जाती है। लेखक के विषय में संकेत मिलता है कि विष्णुशर्मा नाम के विद्वान भारतीय नीतिशास्त्र में बड़े प्रवीण थे। उन्हें नीतिशास्त्रों का पूर्ण

Scanned by CamScanner

ज्ञान था। उन्होंने सभी नीति–ग्रन्थों का सार–संग्रह करके पञ्चतन्त्र नामक ग्रन्थ का निर्माण किया। उन्हें अपने विशिष्ट वैदुष्य पर पूर्णतया विश्वास था और इसलिए उन्होंने राजा को चुनौती देते हुए स्पष्ट शब्दो में कहा था कि यदि में छः महिनों में आपके राजकुमारों को नीतिशास्त्रों का ज्ञान नहीं करा सकूगाँ तो अपने नाम का त्याग कर दूगाँ।

पञ्चतन्त्र का ही पाचवाँ तन्त्र अर्थात् अपरीक्षितकारक अन्तिम भाग है जिसमें मुख्यतया विचारपूर्वक सूपरीक्षित कार्य करने की नीति पर ग्रन्थकार ने बल दिया है। इसके नाम से ही स्पष्ट है कि बिना भलीभाँति विचार किये एवं बिना अच्छी तरह से देखे सुने गये किसी कार्य को करने वाले व्यक्ति को सफलता नहीं प्राप्त होती बल्कि कठिनाइयों का ही अनुभव करना पड़ता है। अपरीक्षित कारक में कुल पन्द्रह कथाएँ है। बी.ए.एम.एस. के पाठ्यक्रम पर आधारित पाँच कहानियाँ सानुवाद यहां पर वर्णित की गई है। पाँच कथाएँ हैं–

1. क्षपणक कथा
2. ब्राह्मणी नकुल कथा
3. लोभाविष्ट–चक्रधर–कथा
4. सिंहकारक–मूर्खब्राह्मण कथा
5. मूर्ख–पण्डित कथा।

Scanned by CamScanner

# अथ अपरीक्षितकारकम्

## १. क्षपणक कथा

अथेदमारभ्यतेऽपरीक्षितकारकं नाम पंचम तन्त्रं यस्यायमादिमः श्लोकः —नाममं

इसके पश्चात् यह अपरीक्षितकारक नामक पंचम तन्त्र आरम्भ किया जाता है जिसका यह प्रारम्भिक श्लोक है —

कुदृष्टं कुपरिज्ञातं कुश्रुतं कुपरीक्षितम्।
तन्नरेण न कर्तव्यं नापितेनाऽत्र यत्कृतम्।।१।।

अन्वयः — अत्र नापितेन कुदृष्टम्, कुपरिज्ञातम्, कुश्रुतम्, कुपरीक्षितम् यत् कृतम् तत् नरेण न कर्तव्यम्।।१।।

अनुवाद — यहाँ नाई से अच्छी प्रकार देखे बिना, अच्छी प्रकार जाने बिना, ठीक तरह सुने बिना, भली प्रकार परीक्षा किए बिना जो किया, वह (कभी भी किसी भी) व्यक्ति को नहीं करना चाहिए।

**व्याकरण बोध — कर्तव्यम्** = कृ + तव्यत् (करना चाहिए)। **कुदृष्टम्** = कुत्सितं + दृश्टम् (अव्यभीभाव) कृ + दृश् + क्त। **कुपरिज्ञातम्** = कुपरिज्ञातम्—कुत्सितं परिज्ञातम् (अव्ययीभाव) कु + परि + ज्ञा + क्तं। **कुश्रुतम्** = कुत्सितं श्रुतम् (अव्यभीभाव) कु + श्रु + क्त। **कुपरीक्षितम्**= कुत्सितं परीक्षितम् (अव्ययीभाव) कु + परि + ईक्ष् + क्त। **कृतम्**—कृ + क्त (किया)। **तत्** = नपुंसकलिंग प्रथमा विभक्ति एकवचन। **नरेण, नापितेन** = तृतीया विभक्ति एकवचन। **न, अत्र** = अव्ययम्

**तद्यथाऽनूश्रूयते — अस्ति दाक्षिणात्ये जनपदे पाटलिपुत्रं नाम नगरम्। तत्र मणिभद्रो नाम श्रेष्ठी प्रतिवसति स्म। तस्य च धर्मार्थकाममोक्षकर्माणि कुर्वतो विधिवशाद्धनक्षयः संजातः। ततो विभवक्षयादपमानपरम्परया परं विषादं गतः। अथाऽन्यदा रात्रौ सुप्तश्चिन्तितवान् — "अहो, धिगियं दरिद्रता।।" उक्तंच —**

Scanned by CamScanner

Q मानव जीवन मे धन का क्या महत्व हैं ?



**अनुवाद** – तो जैसा सुना जाता है – दक्षिण प्रदेश में ' पाटलिपुत्र' नामक नगर है। वहाँ 'मणिभद्र' नामक सेठ रहता था। धर्म –अर्थ–काम एवं मोक्ष सम्बन्धित कार्यों को करते हुए भाग्यवश (उसके) धन का नाश हो गया। उसके पश्चात् (वह) ऐश्वर्य का विनाश होने से अपमानपरम्परा द्वारा अत्यन्त दुःखी हुआ। तब एक रात में सोते हुए उसने सोचा – 'ओह'! इस दरिद्रता को धिक्कार है। कहा भी है –

**शीलं शौचं क्षान्तिर्दाक्षिण्यं मधुरता कुले जन्म।**
**न विराजन्ति हि सर्वे वित्तविहिनस्य पुरूषस्य।।२।।**

**अन्वयः** – शीलम्, शौचम्, क्षान्तिः, दाक्षिण्यम्, मधुरता, कुले जन्म च सर्वे हि वित्तविहीनस्य पुरूषस्य न विराजन्ति।।२।।

**अनुवाद** – श्रेष्ठ आचरण, पवित्रता, क्षमा, उदारता, मधुरता, उच्चकुल में जन्म (ये) सभी वस्तुतः निर्धन व्यक्ति में सुशोभित नहीं होते हैं।

**व्याकरण बोध** :– **कुले**= सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **विराजन्ति** = लट् लकार, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **वित्तविहिनस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **पुरूषस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **शीलम्** = शील + अच्, प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **विराजन्ति** =वि+ राज् (दीप्तौ) + प्र. पु., बहुवचन.। **वित्तविहीनस्य** = वित्तेन विहीनः (तृतीय तत्पुरूष) तस्य। **क्षान्तिः** = क्षम् + क्तिन् (क्षमा)। **दाक्षिण्यम्** = दक्षिण + ष्यञ्। **शौचम्** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **क्षान्तिः** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **दाक्षिण्यम्** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन।

ज्ञान

सम्मान

**मानो वा दर्पो वा विज्ञानं विभ्रमः सुबुद्धिर्वा।**
**सर्वः प्रणश्यति समं, वित्तविहीनो यदा पुरूषः।।३।।**

**अन्वयः** – यदा पुरूषः वित्तविहीनः (भवति तस्य) मानः वा दर्पः वा विज्ञानम् वा विभ्रमः सुबुद्धि वा सर्वम् समम् प्रणश्यति।।३।।

**अनुवाद**– जब व्यक्ति धनरहित हो जाता है तो उसका सम्मान, अहंकार, विविध प्रकार का ज्ञान अथवा विलासपूर्ण क्रियाकलाप और श्रेष्ठबुद्धि सभी एक साथ नष्ट हो जाते हैं।

**व्याकरण बोध** – **मानः** = मन् + घञ्। **प्रणश्यति** = प्र +नश् + णिच् + लट्, प्रथम पुरूष, एकवचन। **दर्पः** = दृप् + घञ्। **विज्ञानम्** = वि + ज्ञा + ल्युट्। **विभ्रमः** = वि + भ्रम् + घञ्। **सुबुद्धिर्वा** = सुबुद्धिः + वा = विसर्ग सन्धि। **सर्वम्** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **प्रणश्यतिः** = नश् धातु, लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **पुरूषः**= प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **वा, यदा**=अव्यय। **समम्**=अव्यय।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

प्रतिदिवसं याति लयं वसन्तवाताहतेव शिशिरश्रीः।
बुद्धिर्बुद्धिमतापि कुटुम्बभरचिन्तया सततम्।।४।।

**अन्वयः**— कुटुम्बभरचिन्तया बुद्धिमताम् अपि बुद्धिः सततं वसन्त — वाता— हता शिशिरश्रीः इव प्रतिदिवसम् लयम् याति।।४।।

**अनुवाद** — परिवार के पालन — पोषण की चिन्ता से बुद्धिमानों की भी बुद्धि निरन्तर वसन्त की वायु से नष्ट हुई शिशिर ऋतु की शोभा के समान नष्ट हो जाती है अर्थात् वह निरन्तर अपने परिवार के बारे में ही सोचता रहता है।

**व्याकरण बोध :— याति** = इण् (गतौ) + लट्, प्रथम पुरूष एकवचन। **शिशिरश्रीः** = शशिरस्य श्रीः (षष्ठी तत्पुरूष) तथा। **प्रतिदिवसम्** = दिवसं दिवसं प्रति (अव्ययीभाव समास)। **कुटुम्बभरचिन्तया** = कुटुम्बभरस्य चिन्ता। (षष्ठी तत्पुरूष)। **बुद्धिः** = बुध् + क्तिन् (बुद्धि)। बुद्धिमताम्—बुद्धि + मतुप्, षष्ठी विभक्ति बहुवचन। **हतेव** = हत इव = गुणसन्धि। **बुद्धिर्बुद्धिमतामपि** = बुद्धिः + बुद्धिमतामपि—विसर्ग सन्धि। **चिन्तया** = तृतीया विभक्ति, एकवचन। **सततम्, अपि** = अव्यय।

नश्यति विपुलमतेरपि बुद्धिः पुरूषस्य मन्दविभवस्य।
घृतलवणतैलतण्डुलवस्त्रेन्धनचिन्तया सततम्।।५।।

**अन्वयः** — विपुलमतेः मन्दविभवस्य पुरूषस्य अपि बुद्धिः सततम् घृत—लवण—तैल—तण्डुल—वस्त्र—इन्धन—चिन्तया नश्यति।।५।।

**अनुवाद** — अत्यधिक बुद्धिमान् होने पर भी निर्धन व्यक्ति की भी बुद्धि निरन्तर घी, नमक, तेल, चावल, वस्त्र एवं इन्धन (एकत्र करने की) चिन्ता के कारण नष्ट हो जाती है।

**व्याकरण बोध :— नश्यति** = नश + लट्, प्रथम पुरूष एकवचन। **मन्दविभस्य**= मन्दः विभवः यस्य सः (बहुव्रीहि) तस्य। **विपुलमतेः** = विपुला मतिः यस्य सः (बहुव्रीहि) तस्य। **विपुलमतेरपि**—विपुलमतेः + अपि = विसर्ग सन्धि। **विपुलमतेः** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **पुरूषस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **मन्द विभवस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **वस्त्रेन्धन** = वस्त्र + इंधन = गुणसन्धि। **चिन्तया** = तृतीया विभक्ति, एकवचन। **सततम्, अपि** = अव्यय।

गगनमिव नष्टतारं, शुष्कमिव सरः, श्मशानमिव रौद्रम्।
प्रियदर्शनमपि रूक्षं, भवति गृहं धनविहीनस्य।।६।।

**अन्वयः** — धनविहीनस्य गृहम् प्रियदर्शनम् अपि, नष्टतारम् गगनम् इव, शुष्कम् सरः इव, रौद्रम् श्मशानम् इव रूक्षम् भवति।।६।।

Scanned by CamScanner

**अनुवाद** – धन से रहित व्यक्ति का घर देखने में सुन्दर होते हुए भी नष्ट हुए तारों वाले आकाश के समान, सूखे हुए सरोवर के समान रुक्ष, भयंकर श्मशान के समान रूखा होता है अर्थात् धन के अभाव वह घर शोभा नहीं देता है।

**व्याकरण बोधः** – **प्रियदर्शनम्** =प्रियं दर्शनं यस्य तत् (बहुव्रीहि)। **रूक्षम्** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **गगनम्** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **नष्टतारम्** = नष्टानि तारकानि यस्मिन् तत् (बहुव्रीहि)। **भवति** = भू + तिप्, लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **शुष्कम्** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **सरः**= प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **रौद्रम्**= प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **गृहम्** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन, नपुसक लिंग। **धनविहिनस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **श्मशानम्** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन।

**न विभाव्यन्ते लघवो वित्तविहीनाः पुरोऽपि निवसन्तः।**
**सततं जातविनष्टाः पयसामिव बुद्बुदाः पयसि।।७।।**

**अन्वयः**–पुरः निवसन्तः अपि वित्तविहीनाः लघवः सततम्, पयसि जात – विनष्टाः पयसाम्, बुदबुदाः इव न विभाव्यन्ते।।७।।

**अनुवाद**– धनविहीन व्यक्ति तुच्छ हो जाता है। सामने रहने पर भी लोग, निरन्तर जल में उत्पन्न और विनष्ट होने वाले जल के बुलबुलों के समान दिखाई नहीं देते है।

**व्याकरण बोधः**– **निवसन्तः** = नि + वस्, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **विभाव्यन्ते** = वि+भू + णिच् + प्रथम पुरूष,बहुवचन, आत्मनेय पद। **लघवः** =लघु+ जस् + प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **जातविनष्टा** = जातंश्च विनष्टश्च – जातविनष्ट, ते (द्वन्द समास)। **पयसि** = पयस् + सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **वित्तविहिनाः** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **बुद्बुदाः** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन।

**सुकुलं कुशलं, सुजनं विहाय, कुलकुशलशीलविकलेऽपि।**
**आढ्ये कल्पतराविव नित्यं रज्यन्ति जननिवहाः।।८।।**

**अन्वयः**– जननिवहाः सुकुलम् कुशलम् सुजनम् विहाय, कुल – कुशल–शील–विकले अपि आढ्ये कल्पतरौ इव नित्यम् रज्यन्ति।।८।।

**अनुवाद** – लोगों के समूह उच्चकुलोत्पन्न, निपुण (एवं) सज्जन को छोड़कर कुलीनता, कुशलता, एवं चरित्र से हीन भी धनवान व्यक्ति मे कल्पवृक्ष के समान हमेशा प्रसन्न होते हैं। अर्थात् लोगो की दृष्टि में गुणवान की अपेक्षा धनवान का ही अधिक महत्व होता है।

**व्याकरण बोध** :– **सुकुलम्** = द्वितीया विभक्ति, एकवचन। **विकलेऽपि** = पूर्वरूप सन्धि– विकले + अपि। **आढये** = सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **कल्पंतराविव** = कल्पतरौ +

Scanned by CamScanner

इव = अयादिसन्धि। **इव** = अव्यय। **जन निवहा:** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **विहाय** = वि + हा + ल्यप्। **रज्यन्ति** = रंज + लट्, प्र. पु. बहुवचन। **जननिवहा:** = जनानां निवह: (षष्ठी तत्पुरूष)। **सुजनम्** = श्रेष्ठ: जन: (कर्मधारय) तम्, द्वितीया विभक्ति, एकवचन)।

9
**विफलमिह पूर्वसुकृतं विद्यावन्तोऽपि कुलसमुद्भूता:।**
**यस्य यदा विभव: स्यात्तस्य तदा दासतां यान्ति॥९॥**

**अन्वय: —** इह पूर्वसुकृतम् विफलम्, विद्यावन्त: कुलसमुद्भूता: अपि यदा यस्य विभव: स्यात्, तदा तस्य दासताम् यान्ति॥९॥

**अनुवाद —** इस संसार में पहले किया गया पुण्य व्यर्थ हो जाता है। (क्योंकि) विद्वान (और) उच्चकुल में उत्पन्न होते हुए भी जब जिसके पास ऐश्वर्य होता है, तब उसकी ही दासता को प्राप्त हो जाते हैं।

**व्याकरण बोध:— विद्यावन्तोऽपि** = विद्यावन्तो + अपि— पूर्वरूप सन्धि। **यान्ति** = इण् (गतौ) + लट्, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **विद्यावन्त:** = विद्या + वतुप्, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **स्यात्** =अस् + विधिलिंग, प्रथम पुरूष, एकवचन, प्रथमा विभक्ति। **समुद्भूता:** = सम् + उत् + भू + क्त, प्रथमा विभक्ति, बहुवन। **विभव:** = वि + भू + अच्, पुल्लिंग, प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **विफलम्** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **यस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **तस्य** = तत् शब्द, षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **यदा, तदा, इह** = अव्यय।

10
**लघुरयमाह न लोक: कामं गर्जन्तमपि पतिं पयसाम्।**
**सर्वमलज्जाकरमिह यद्यत्कुर्वन्ति परिपूर्णा:॥१०॥**

**अन्वय:—** लोक: कामम् गर्जन्तम् पयसाम् पतिम् अपि 'अयम् लघु:' न आह (कुत:) इह परिपूर्णा: यत् —यत् कुर्वन्ति (तत्) सर्वम् अलज्जाकरम् (भवति)॥

**अनुवाद—** संसार ने व्यर्थ गरजते हुए जलों के स्वामी (समुद्र) को भी 'यह छोटा है' कभी भी किसी ने भी ऐसा नहीं कहा, (क्योंकि) इस संसार में सम्पन्न लोग जो—जो करते हैं, वह सब लज्जाकर नहीं होता है।

**व्याकरण बोध :— लोक:** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **लघु:** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **अपि, इह** = अव्यय। **यत्** = यत् शब्द, प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **लोक:** = लोक् + घञ्। **आह** = ब्रू + लट् + प्रथम पुरूष, एकवचन। **गर्जन्तम्** =गर्ज् + शतृ, द्वितीया विभक्ति, एकवचन। **कुर्वन्ति** = कृ + लट्, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **अलज्जाकरम्** = न लज्जाकरम्, इति (नञ् समास)। **परिपूर्णा:** = परि + पूर् + क्त, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **लघुरयमाह** =लघु:+ अयमाह = विसर्ग सन्धि।

Scanned by CamScanner

एवं सम्प्रधार्य भूयोऽप्यचिन्तयत्—'तदहमनशनं कृत्वा प्राणानुत्सृजामि। किमनेन नो व्यर्थजीवितव्यसनेन? 'एवं निश्चयं कृत्वा सुप्तः। अथ तस्य स्वप्ने पद्मनिधिः क्षपणकरूपं दर्शनं दत्त्वा प्रोवाच — 'भोः श्रेष्ठिन्! मा त्वमं वैराग्यं गच्छ। अहं पद्मनिधिस्तव पूर्वपुरूषोपार्जितः। तदनेनैव रूपेण प्रातः त्वद्गृहमागमिष्यामि। तत्त्वयाऽहं लगुडप्रहारेण शिरसि ताडनीयः, येन कनकमयो भूत्वाऽक्षयो भवामि।'

अथ प्रातः प्रबुद्धः, सन् स्वप्नं स्मरंश्चिन्ताचक्रमारूढस्तिष्ठति—'अहो, सत्योऽयं स्वप्नः, किं वा असत्यो भविष्यति, न ज्ञायते। अथवा नूनं मिथ्याऽनेन भाव्यम्। यतोऽहमहर्निशं केवलं वित्तमेव चिन्तयामि। उक्तचं—

**अनुवाद** — इस प्रकार विचार करके (उसने) फिर से सोचा — 'इसलिए मैं 'अनशन' करके प्राणों को छोड़ देता हूँ। हमारे इस व्यर्थजीवनरूपी व्यसन से क्या (लाभ)? इस प्रकार निश्चय करके सो गया।

इसके पश्चात उसके स्वप्न मे क्षपणक रूपधारी पद्मनिधि ने दर्शन देकर कहा — हे सेठ! तुम वैराग्य को प्राप्त मत होओ। तुम्हारे पूर्वजों के पुण्यों द्वारा उपार्जित मैं पद्मनिधि हूँ। ' तो (मैं) इसी रूप में प्रातः तुम्हारे घर पर आऊँगा। तब तुम मुझे डण्डे से सिर पर मारना, जिससे सोने का होकर (मैं) कभी नष्ट न होने वाला हो जाऊँगा।

तत्पश्चात् प्रातः काल जागकर, स्वप्न को स्मरण करता हुआ वह सोचता है — 'अहा! वह स्वप्न सत्य (होगा) अथवा असत्य होगा, समझ नहीं आता। अथवा इसे निश्चय ही असत्य होना चाहिए, क्योंकि मैं रात दिन केवल धन के विषय में सोचता रहता हूँ। कहा भी गया है—

**व्याधितेन सशोकेन चिन्ताग्रस्तेन जन्तुना।**
**कामार्तेनाऽथ मत्तेन दृष्टः स्वप्नो निरर्थकः।।११।।**

**अन्वयः** — व्याधितेन, सशोकेन, चिन्ताग्रस्तेन, कामार्तेन अथ मत्तेन जन्तुना दृष्टः स्वप्नः निरर्थकः (भवति)।।११।।

**अनुवाद** — व्याधियुक्त अर्थात् रोगी, शोकग्रस्त, चिन्ताग्रस्त, कामवासना से पीड़ित तथा उन्मत प्राणी जो भी स्वप्न देखता है वह निरर्थक ही होता है।

**व्याकरण बोध :— व्याधितेन**=तृतीया विभक्ति, एकवचन। **सशोकेन**=तृतीया विभक्ति, एकवचन। **जन्तुना** = तृतीया विभक्ति, एकवचन। **दृष्टिः** = दृश् + क्त। **कामार्तेन** = कामेन आर्तः (तृतीय तत्पुरूष) तेन। **मत्तेन** = मद् + क्त, तृतीया, विभक्ति एकवचन। **सशोकेन** = शोकेन सहितः (तृतीया तत्पुरूष) तेन। **चिन्ताग्रस्तेन** = चिन्तया ग्रस्तः (तृतीया तत्पुरूष) तेन। **व्याधितेन**=वि+आ+धा+कि+क्त+तृ. वि., ए.व.। **कामर्तेनाऽथ**= कामार्तेन+अथ (पूर्वरूप सन्धि)।

Scanned by CamScanner

एतस्मिन्नन्तरे तस्य भार्यया कश्चिन्नापितः पादप्रक्षालनायाहूतः। अत्रान्तरे च यथा निर्दिश्टः क्षपणकः सहसा प्रादुर्बभूव। अथ स तमालोक्य प्रहृष्टमना यथा–सन्नकाष्ठदण्डेन तं शिरस्यताडयत्। सोऽपि सुवर्णमयो भूत्वा तत्क्षणाद्भूमौ निपतितः। अथ तं स श्रेष्ठी निभृतं स्वगृहमध्ये कृत्वा, नापितं सन्तोष्य प्रोवाच – 'तदेत–द्धनं, वस्त्राणि च मया दत्तानि गृहाण। भद्र! पुनः कस्यचिन्नाख्येयोऽयं वृत्तान्तः।'

नापितोऽपि स्वगृहं गत्वा व्यचिन्तयत्–"नूनमेते सर्वेऽपि नग्नकाः शिरसि ताडिताः कांचनमया भवन्ति। तदहमपि प्रातः प्रभूतानाहूय लगुडैः शिरसि हन्मि, येन प्रभूतं हाटकं मे भवति।" एवं चिन्तयतो महता कष्टेन निशां व्यतिचक्राम।

अथ प्रभातेऽभ्युत्थाय वृहल्लगुडमेकं प्रगुणीकृत्य, क्षपणकविहारं गत्वा जिनेन्द्रस्य प्रदक्षिणात्रयं विधाय, जानुभ्यामवनिं गत्वा वक्त्रद्वारन्यस्तोत्तरीयांचलस्तार–स्वरेणेमं श्लोकमपठत्–

**अनुवाद** – इसी बीच उसकी पत्नी ने पैर धोने के लिए किसी नाई को बुलाया। और इसी बीच जैसा बताया गया था (जैसा) जैन साधु सहसा प्रकट हो गया। इसके बाद उसने उसे देखकर प्रसन्न मन से जैसा कहा गया था,सेठ ने समीप स्थित लकड़ी के डण्डे से उसके सिर पर प्रहार किया। वह भी सोने का होकर उसी क्षण पृथ्वी पर गिर पड़ा। तत्पश्चात् उसको घरमें छिपाकर नाई को सन्तुष्ट करके वह सेठ बोला– "मेरे द्वारा दिये गए इस धन और वस्त्रों को ग्रहण करो, किन्तु हे भाई! यह समाचार (तुम) किसी से नहीं कहना।

नाई ने भी अपने घर जाकर विचार किया– "निश्चय ही सिर पर मारे गये ये सभी नग्न (साधु) सोने के हो जाते हैं। तो मै प्रातः बहुतों को बुलाकर डण्डों से सिर पर प्रहार करूँगा। जिससे मेरे पास बहुत सा सोना हो जायगा।' इस प्रकार सोचते हुए (उसने) अत्यधिक कष्टपूर्वक रात्रि को व्यतीत किया।

तब प्रातः काल उठकर एक लम्बे डण्डे को भली प्रकार तैयार करके, जैन साधुओं के मठ में जाकर जिन – प्रमुख (जितेन्द्र) की तीन बार प्रदक्षिणा करके घुटनों से पृथ्वी पर झुककर, मुखद्वार पर उत्तरीय वस्त्र को रखकर (उसने) ऊँचे स्वर में यह श्लोक पढ़ा :–

**जयन्ति ते जिना येषां केवलज्ञानशालिनाम्।**
**आजन्मः स्मरोत्पत्तौ मानसेनोषरायितम्।।१२।।**

**अन्वयः** – केवलज्ञानशालिनाम् ते जिनाः जयन्ति, येषाम् आजन्मनः स्मरोत्पत्तौ मानसेन ऊषरायितम्।।१२।।

Scanned by CamScanner

**अनुवाद** – एकमात्र ज्ञान सम्पन्न उन जैन साधुओं की विजय होवे, जिन्होने जन्म से (ही) कामदेव की उत्पत्ति के विषय मे मन को बंजर बना लिया है अर्थात् जिनके मन में कामविकार नहीं होता।

**व्याकरण बोध** :– **जयन्ति** = जि + लट्, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **स्मरोत्पत्तौ** = स्मरस्य उत्पत्तिः (षष्ठी तत्पुरूष) तस्याम्। **आजन्मनः** = जन्मनः आरभ्य (अव्ययीभाव)। **ऊषरायितम्** = ऊषर इव आचरितम्। **ते** = तत् शब्द, प्रथमा विभक्ति, बहुवचनः, पुल्लिंग। **येषाम्** = यत् शब्द, षष्ठी विभक्ति, बहुवचन। **ज्ञानशालिनाम्** = षष्ठी बहुवचन। **मानसेन** = तृतीया विभक्ति, एकवचन।

**सा जिह्वा या जिनं स्तौति तच्चित्तं यज्जिने रतम्।**
**तौ एव तु करौ श्लाघ्यौ यौ तत्पूजाकरौ करौ।।१३।।**

**अन्वयः**– सा जिह्वा या जिनम् स्तौति, तत् चित्तम् यत् जिने रतम्, तौ एव च श्लाघ्यौ करौ यौ तत् पूजाकरौ।।१३।।

**अनुवाद** – वही (वस्तुतः) जिभ है जो जिन (जैन साधु) की स्तुति करती है, वही (वस्तुतः) मन है, जो जैन साधुओं में लगा हुआ है तथा वे दोनों ही (वस्तुतः) प्रशंसनीय हाथ हैं, जो उन (जिनों) की पूजा में लगे हुए हैं।

**व्याकरण बोध** : – **करौ** = प्रथमा विभक्ति, द्विवचन। **स्तौति** = स्तु + लट्, प्रथम पुरूष, एकवचन। **रतम्** = रम् + क्त। **श्लाघ्यौ** = श्लाघ् + ण्यत्, प्रथम विभक्ति द्विवचन। **सा** = तत् शब्द, प्रथमा विभक्ति, एकवचन, स्त्रीलिंग। **या** = यत् शब्द,, प्रथमा विभक्ति, एकवचन, स्त्रीलिंग। **तत्** = तत् शब्द, नपुसकं लिंग , प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **जिने** = सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **तो** = तत्शब्द, प्रथमा विभक्ति, द्विवचन। **यौ** = यत् शब्द, प्रथमा विभक्ति, द्विवचन पुल्लिंग।

**ध्यानव्याजमुपेत्य चिन्तयसि कामुन्मील्य चक्षुः क्षणं**
**पश्यानङ्गशरातुरं जनमिमं त्राताऽपि नो रक्षसि।**
**मिथ्याकारूणिकोऽसि निर्घृणतरस्त्वत्तः कुतोऽन्यः पुमान्**
**सेर्ष्यं मारवधूभिरित्यभिहितो बौद्धो जिनः पातु वः।।१४।।**

**अन्वयः**– ध्यान–व्याजम् उपेत्य काम् चिन्तयसि ? क्षणम् चक्षुः उन्मील्य अनङ्गशरातुरम् इमम् जनम् पश्य। त्राता अपि नो रक्षसि। मिथ्या कारूणिकः असि। त्वत्तः निघृणतरः पुमान् अन्यः कुतः? इति मारवधूमिः सेर्ष्यम् अभिहितः बौद्धः जिनः वः पातु।१४।

Scanned by CamScanner

**अनुवाद –** ध्यान का बहाना बनाकर (तुम) किस सुन्दरी का चिन्तन कर रहे हो? क्षणभर के लिये आँखें खोलकर कामदेव के बाणों से व्यथित इन जन को (तो) देखो, रक्षक होते हुए भी (तुम हमारी) रक्षा नहीं कर रहे हो। व्यर्थ में ही तुम दयालु कहलाते हो। तुमसे अधिक निष्ठुर पुरूष कोईओर नहीं है। इस प्रकार अप्सराओं द्वारा ईर्ष्यापूर्वक कहे गए ज्ञानसम्पन्न जैन तीर्थकर (महाराज) आप सबकी रक्षा करें।

**व्याकरण बोधः –** **चक्षुः** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **जनम्** = द्वितीया विभक्ति, एकवचन। **नः** = अस्मद शब्द। **कुतः** = किम् शब्द, तसिल् प्रत्यय। **सैर्ष्य** = स + इर्ष्य = गुणसन्धि। **उपेत्य** = उप + इण् + ल्यप्। **चिन्तयसि** = चिन्त् + लट्, मध्यम पुरूष, एकवचन। **उन्मील्य** = उत् + मील् + ल्यप्। **त्राता** = त्रै + तश्च्, पुल्लिंग, प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **पश्यसि** = दृश् + लट्, मध्यम पुरूष, एकवचन। **पातु** = पा + लोट्, प्रथम पुरूष, एकवचन। **त्वतः** = त्वत् + तसिल्। **अभिहितः**– धा + क्त। **पश्य** = लोट् लकार, दृश धातु, मध्यम पुरूष, एकवचन। **रक्षसि** = रक्ष धातु, मध्यम पुरूष, एकवचन, लट् लकार। **असि** =अस् धातु। लट् लकार, मध्यम पुरूष, एकवचन।

**एवं संस्तुत्य, ततः प्रधानक्षपणकमासाद्य क्षितिनिहितजानुचरणः "नमोऽस्तु, वन्दे" इत्युच्चार्य लब्धधर्मवृद्ध्याशीर्वादः सुखमालिकाऽनुग्रहलब्धव्रतादेश उत्तरीय–निबद्धग्रन्थिः सप्रश्रयमिदमाह–"भगवन्! अद्य विरहणक्रिया समस्तमुनिसमेतेनास्मद्गृहे कर्त्तव्या।"**

**स आह – "भो श्रावक! धर्मज्ञोऽपि किमेवं वदसि, किं वयं ब्राह्मणसमानाः तत् आमन्त्रणं करोषि? वयं सदैव तत्कालपरिचर्यया भ्रमन्तो भक्तिभाजं श्रावकमवलोक्य तस्य गृहं गच्छामः। तेन कृच्छ्राऽदभ्यर्थितास्तद्गृहे प्राणधारणमात्रामशनक्रियां कुर्मः। तद्गम्यताम् नैवं भूयोऽपि वाच्यम्।।"**

**अनुवाद –** इस प्रकार स्तुति करके, उसके बाद मुख्य क्षपणक के पास जाकर, पैर एवं घुटनों को पृथ्वी पर रखकर – 'नमस्कार होवे, मैं आपकी वन्दना करता हूँ, इस प्रकार कहकर, धर्म की वृद्धि का आशीर्वाद प्राप्त करके, कण्ठी– मालारूप अनुग्रह से व्रत का आदेश प्राप्त करके, दुपट्टे की गाँठ बाँधे हुए (उसने) विनम्रतापूर्वक यह कहा – "भगवन्! सभी मुनियों के साथ आज की पारणा (भोजन क्रिया) हमारे घर पर कीजिएगा'।

वह बोला – "अरे श्रावक! धर्म ज्ञाता होते हुए भी ऐसा क्यों कह रहे हो? क्या हम ब्राह्मणों के समान है जो (हमें) आमन्त्रित कर रहे हो। हम तो हमेशा उस भोजन समय की उपासना के द्वारा घूमते हुए, भक्तिभाव से युक्त श्रावक को देखकर उसे घर पर चले जाते है तथा उसके द्वारा अत्यधिक प्रार्थना किये गए (हम) उसके घर में मुश्किल से प्राणधारणमात्र भोजन करते हैं। इसलिए चले जाओ, फिर कभी ऐसा नहीं कहना!"

Scanned by CamScanner

तच्छ्रुत्वा नापित आह : ''भगवन्! वेद्म्यहं युष्मद्धर्मम्। परं भवतो बहवः श्रावका आह्वयन्ति। साम्प्रतं पुनः पुस्तकाच्छादनयोग्यानि कर्पटानि बहुमूल्यानि प्रगुणीकृतानि। तथा पुस्तकानां लेखनाय, लेखकानां च वित्तं संचितमास्ते। तत्सर्वथा कालोचित्तं कार्यम्।''

ततो नापितोऽपि स्वगृहं गतः। तत्र च गत्वा खादिरमयं लगुडं सज्जीकृत्य, कपाटयुगलद्वारि समाधाय सार्द्धप्रहरैकसमये भूयोऽपि विहारद्वारमाश्रित्य सर्वान्क्रमेण निष्क्रामतो गुरूप्रार्थनया स्वगृहमानयत। तेऽपि सर्वे कर्पटवित्तलोभेन भक्तियुक्तानपि परिचित श्रावकान् परित्यज्य प्रहष्टमनसस्तस्य पृष्ठतो ययुः। अथवा साध्विदमुच्यते–

**अनुवाद**– उसे सुनकर नाई बोला – भगवन्! मैं आपके धर्म को जानता हूँ। किन्तु आपके बहुत से श्रावक (आपको) बुलाते रहते हैं, फिर (मैंने) इस समय पुस्तकों को ढकने योग्य बहुत से मूल्यवान् कपड़े इकट्ठे किये हुए हैं तथा पुस्तकों को लिखवाने हेतु लेखकों का धन भी एकत्र किया हुआ है। इसलिए आपको सब प्रकार से विचार करना चाहिए।

उसके बाद नाई भी अपने घर चला गया और वहाँ जाकर खैर की लकड़ी का डण्डा तैयार करके, दोनों किवाडों पर रखकर, डेढ़ प्रहर होने पर पुनः क्षपणक – विहार के द्वार पर पहुँच कर, क्रमशः अत्यधिक प्रार्थनापूर्वक बाहर निकलते हुए (उन्हें) अपने घर ले आया। कपड़े तथा धन के लोभ से वे सब भी परिचित एवं भक्तियुक्त श्रावको को भी छोड़कर प्रसन्न मन से उसके पीछे चल दिए। अथवा वह ठीक कहा जाता है –

**एकाकी गृहसन्त्यक्तः पाणिपात्रो दिगम्बरः।**
**सोऽपि संवाह्यते लोके तृष्णया पश्य कौतुकम्।।१५।।**

**अन्वयः**– कौतुकम् पश्य, एकाकी गृहसंत्यक्तः, पाणिपात्रः दिगम्बरः, सः अपि लोके तृष्णया संवाह्यते।।१५।।

**अनुवाद** – यह आश्चर्य देखो, अकेला, घर को पूरी तरह त्यागने वाला, हाथ को ही पात्ररूप में प्रयोग करने वाला, दिशाएँ ही जिसके वस्त्र हैं। वह भी त्यागी मनुष्य संसार में तृष्णा द्वारा लालसाओं में पड़ जाता है।

**व्याकरण बोधः**– **पश्य** = दृश् + लोट् लकार, मध्यम पुरूष, एकवचन। **सत्यक्त** = सम् + त्यज् + क्त। **पाणिपात्र** = पाणि एव पात्रं यस्य सः (बहुव्रीहि)। **दिगम्बरः** = दिक् अम्बरं यस्य सः (बहुव्रीहि)। **संवाह्यते** = सम् + वह् + णिच्, लट्, आत्मने पद, प्रथम पुरूष एकवचन। **सोऽपि** = सो अपि = पूर्वरूप सन्धि। **सः** = तत् – शब्द, प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **लोके**= सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **तृष्णया** = तृतीया विभक्ति, एकवचन। **कौतुकम्** = द्वितीया विभक्ति, एकवचन।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

**जीर्यन्ते जीर्यतः केशा दन्ता जीर्यन्ति जीर्यतः।**
**चक्षु श्रोत्रे च जीर्येते, तृष्णैका तरूणायते।।१६।।**

**अन्वयः** — जीर्यतः (जनस्य) केशाः, जीर्यन्ते, जीर्यतः दन्ताः जीर्यन्ति चक्षुः च श्रोत्रे, जीर्येते (किन्तु) एका तृष्णा तरूणायते।।१६।।

**अनुवाद** — वृद्ध होने पर व्यक्ति के बालजीर्ण हो जाते हैं। वृद्ध होने पर व्यक्ति के दाँत जीर्ण हो जाते हैं। नेत्र और कान (भी) जीर्ण हो जाते हैं। एकमात्र तृष्णा ही तरूणी के समान आचरण करती है।

**व्याकरण बोधः— जीर्यतः** = जृ (जीर्णे) + शतृ प्रत्यय, षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **जीर्यन्ते** = जृ + लट्, आत्मने पद, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **जीर्येते** = प्रथम पुरूष, एकवचन। **जीर्यन्ति** = जृ + लट् लकार, परस्मै पद, प्रथम पुरूष, एकवचन। **तरूणायते** = तरूण + क्यङ्। **तृष्णैका** = तृष्णा + एका— वृद्धिसन्धि। च = अव्यय।

Next **ततः परं गृहमध्ये तान् प्रवेश्य, द्वारं निभृतं पिधाय, लगुडप्रहारैः शिरस्य—ताडयत्। तेऽपि ताड्यमाना एके मृताः, अन्ये भिन्नमस्तकाः फूत्कर्तुमुपचक्रमिरे। अत्रान्तरे तमाक्रन्दमाकर्ण्य, कोटरक्षपालेनाभिहितम् — "भोः! किमयं कोलाहलो नगरमध्ये? तद्गम्यताम्।"**

**ते च सर्वे तदादेशकारिणस्तत्सहिता वेगात्तद्गृहं गता यावत्पश्यन्ति तावद्रुधि रप्लावितदेहाः पलायमाना नग्नका दृष्टाः पृष्टाश्च "भो किमेतत्?" ते प्रोचुर्यथाऽवस्थितं नापितवृत्तम्।**

**अनुवाद—** उसके बाद उन्हें घर के बीच प्रवेश कराकर, चुपचाप दरवाजा बन्द करके डण्डे से सिर पर मारना आरम्भ कर दिया। मारे जाते हुए उनमें से कुछ तो मर गए, सिर फूटे हुए दूसरों ने चीत्कार करना प्रारम्भ कर दिया। इस बीच उस शोर को सुनकर कोतवाल ने कहा — अरे! नगर के बीच में यह कोलाहल कैसा है? तो जाओ (पता करो)।'

उसके आदेश का पालन करने वाले वे सब भी उसके साथ तेजी से उसके घर गए और जैसे ही देखते हैं, वैसे ही (उन्हें) खून से लथपथ शरीर वाले (इधर — उधर) भागते हुए नग्न (क्षपणक) दिखायी दिये तथा उनसे पूछा — 'अरे यह क्या है?'

उन्होंने जैसा नाई के साथ घटनाक्रम घटा था (सब कुछ) कह दिया।

**तैरपि स नापितो बद्धो हतशेषैः सह धर्माधिष्ठानं नीतः। तैर्नापितः पृष्ट— "भो, किमतेद् भवता कुकृत्यमनुष्ठितम्?" स आह— "किं करोमि। मया श्रेष्ठिमणिभद्रगृहे दृष्ट एवं विधो व्यतिकरः।" सोऽपि सर्वं मणिभद्रवृत्तान्तं यथादृष्टमकथयत्।**

Scanned by CamScanner

**ततः श्रेष्ठिनमाहूय् ते भणितवन्तः– भो श्रेष्ठिन्! किं त्वया कश्चित्क्षपणको व्यापादितः? ततस्तेनाऽपि सर्वः क्षपणकवृत्तान्तस्तेषां निवेदितः। अथ तैरभिहितम् – "अहो शूलमारोप्यतामसौ दुष्टात्मा कुपरीक्षितकारी नापितः।" तथाऽनुष्ठिते तैरभिहितम्–**

**अनुवाद** – उन्होंने भी उस नाई को बाँधकर मरने से बचे हुए (क्षणपकों) के साथ न्यायालय में ले आए। उन्होंने नाई से पूछा – अरे! तुमने यह कैसा कुकृत्य कर डाला।' वह बोला – 'क्या करूँ ? मैंने सेठ मणिभद्र के घर पर इस प्रकार की घटना देखी थी।' उसने भी मणिभद्र वृत्तान्त जैसा देखा था, कह दिया।

तत्पश्चात् सेठ को बुलाकर उन्होंने कहा – 'अरे! सेठ, क्या तुमने किसी क्षपणक को मारा है? तब उसने भी सम्पूर्ण क्षपणकवृत्तान्त उन धर्माधिकारियों से कह दिया। पुनः उन्होंने कहा– ओह! इस दुष्टात्मा, बिना सोचे – समझे काम करने वाले नाई को शूली पर चढ़ा दो।

वैसा करने पर उन (धर्मधिकारियों) ने कहा –

**"कुदृष्टं कुपरिज्ञातं कुश्रुतं कुपरीक्षितम्।**
**तन्नरेण न कर्तव्यं, नापितेनाऽत्र यत्कृतम्।।"**

अथवा साध्विदमुच्यते – अथवा ठीक ही कहा है कि–

**अपरीक्ष्य न कर्तव्यं कर्तव्यं सुपरीक्षितम्।**
**पश्चाद्भवति सन्तापो ब्राह्मण्या नकुले यथा।।१७।।**

**अन्वयः** – अपरीक्ष्य न कर्तव्यम् सुपरीक्षितम् (एव) कर्तव्यम्। (अन्यथा) पश्चात् सन्तापः भवति। यथा ब्राह्मण्या नकुले अभवत।१७।।

**अनुवाद** – बिना परीक्षा किए बिना भली भाँति समझे कोई कार्य नहीं करना चाहिए। भली प्रकार परीक्षा किया गया कार्य ही करना चाहिए। (अन्यथा) बाद में पश्चाताप होता है। जिस प्रकार ब्राह्मणी द्वारा नकुल के विषय में (किया गया)।

**व्याकरण बोधः**– कर्त्तव्यम् = कृ + तव्यत्। **अपरीक्ष्य** =न परीक्ष्य, इति (नञ् समास) नञ्+परि + ईक्ष् + ल्यप्। **पश्चाद्भवति** = पश्चात् + भवति = व्यंजन सन्धि। **सुपरीक्षितम्** = सु + परि + ईक्ष् + ल्यप्। **सन्तापः** = सम् + तप् + घञ्। **भवति** = भू धातु, लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **नकुले** = सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **मणिभद्र आह** – "कथमेतत्?" ते धर्माधिकारिणः प्रोचुः –

**अनुवाद**– मणिभद्र बोला – "यह कैसे?" उन धर्मधिकारियों ने कहा

Scanned by CamScanner

# 2 ब्राह्मणी-नकुल-कथा

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने देवशर्मा नाम ब्राह्मणः प्रतिवसति स्म। तस्य भार्या प्रसूता सुतमजनयत्। तस्मिन्नेव दिने नकुली नकुलं प्रसूय मृता। अथ सा सुतवत्सला दारकवत्तमपि नकुलं स्तन्यदानाऽभ्यङ्गमर्दनादिभिः पुपोष। परं तस्य न विश्वसिति। अपत्यस्नेहस्य सर्वस्नेहातिरिक्ततया सततमेवमाशङ्कते यत् — कदाचिदेष स्वजातिदोषवशादस्य दारकस्य विरूद्धमाचरिष्यति इति। उक्तञ्च —

**अनुवाद** — किसी स्थान पर देवशर्मा नामक ब्राह्मण रहता था। उसकी गर्भवती पत्नी ने एक पुत्र को उत्पन्न किया। उसी दिन नेवली नेवले को उत्पन्न करके मर गयी। तब पुत्र वात्सल्य से युक्त पुत्रवती होते हुए भी उस (ब्राह्मणी) ने नेवले को स्तन से दुग्धपान कराने तथा तैल से अङ्गों की मालिश करने आदि के द्वारा पालन — पोषण किया। परन्तु उस पर विश्वास नहीं करती थी। पुत्र प्रेम के अन्य स्नेहों से बढकर होने के कारण (वह) हमेशा ही शंका करती रहती थी कि— अपने जातिगत दोष के कारण कभी यह नेवला मेरे पुत्र का अनिष्ट न कर दे। कहा भी गया है—

कुपुत्रोऽपि भवेत्पुंसां हृदयानन्दकारकः।
दुर्विनीतः कुरूपोऽपि, मूर्खोऽपि व्यसनी खलः।।२८।।

**अन्वयः**— दुर्विनीत, कुरूपः, मूर्खः, व्यसनी, खलः, कुपुत्रः अपि पुंसाम् हृदयानन्दकारकः भवेत्।।२८।।

**अनुवाद** — दुर्विनीत, कुरूप, मूर्ख, दुराचरण करने वाला, दुष्ट, कुत्सित, पुत्र भी पुरूषों के हृदयों को आनन्द प्रदान करने वाला होता है।

**व्याकरण बोधः**— भवेत् = भू + विधिलिङ्, प्रथम पुरूष, एकवचन। **कुपुत्रः** = कुत्सितः पुत्रः=कर्मधारय समास। **हृदयानन्दकारकः** = हृदयस्य आनन्दः (षष्ठी तत्पुरूष) तस्य कारकः। **पुंसाम्** = पुंस् + षष्ठी विभक्ति, बहुवचन। **खलः** = खल् + अच्। **कुपुत्रोऽपि** = कुपुत्रो + अपि=पूर्वरूप सन्धि। **मूर्खोऽपि** = मूर्खो + अपि = पूर्वरूप सन्धि। **हृदयानन्द** = हृदय + आनन्दः=दीर्घ सन्धि।

**एवं च भाषते लोकश्चन्दनं किल शीतलम्।**
**पुत्रगात्रस्य संस्पर्शश्चन्दनादतिरिच्यते।।२९।।**

**अन्वयः**— लोकः एवम् भाषते (यत्) चन्दनम् किल शीतलम् (भवति), पुत्रगात्रस्य संस्पर्शः (तु) चन्दनात् अपि अतिरिच्यते।।२९।।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

अनुवाद– संसार ऐसा कहता है (कि) चन्दन ही शीतल (होता) है, (वस्तुत:) पुत्र के शरीर का स्पर्श (तो) चन्दन से भी बढ़कर होता है।

**व्याकरण बोध :– च, किल्** = अव्यय। **भाषते** = 'भाष्' + लट्, आत्मने, प्रथम पुरूष, एकवचन। **चन्दनात्** = पंचमी विभक्ति, एकवचन। **पुत्रगात्रस्य** = पुत्रस्य गात्रम् (षष्ठी तत्पुरूष)। तस्य। **संस्पर्श** = सम् + स्पृश + घञ्। **अतिरिच्यते** = अति + रिच् + लट्, आत्मनेपद, प्रथम पुरूष, एकवचन। **लोकश्चन्दनम्** = लोक: चन्दनम् = विसर्गसन्धि।

**सौहृदस्य न वांछन्ति जनकस्य हितस्य च।**

**लोका: प्रपालकस्याऽपि यथा पुत्रस्य बन्धनम्।।२०।।**

**अन्वय:–** लोका: यथा पुत्रस्य बन्धनम् वांछन्ति सौहृदस्य जनकस्य हितस्य प्रपालकस्य अपि न (वांछन्ति)।।२०।।

**अनुवाद–** लोग जिस प्रकार पुत्र के बन्धन को चाहते हैं, (वैसा) मित्र के, पिता के, हितकर के, पालन – पोषण करने वाले के (बन्धन को) भी नहीं चाहते है।।२०।।

**व्याकरण बोध:– सौहृदस्य** = सुहृद् + अण् + षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **वांछन्ति** = लट् लकार, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **जनकस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **पुत्रस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **हितस्य** = धा + क्त, षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **बन्धनम्** = बन्ध : ल्युट प्रत्यय, द्वितीय विभक्ति, एकवचन। **प्रपालकस्य** = प्र + पाल् + ण्वुल् प्रत्यय, षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **वांछन्ति** =वांछ् + लट् प्रथम् पुरूष, बहुवचन। **न, च, यथा** = अव्यय।

**अथ सा कदाचिच्छय्यायां पुत्रं शाययित्वा जलकुम्भमादाय, पतिमुवाच – ''ब्राह्मण! जलार्थमहं तडागे यास्यामि। त्वया पुत्रोऽयं नकुलाद्रक्षणीय:।''**

**अथ तस्यां गतायां, पृष्ठे ब्राह्मणोऽपि शून्यं गृहं मुक्त्वा भिक्षार्थं क्वचिन्निर्गत:। अत्रान्तरे दैववशात् कृष्णसर्पो बिलान्निष्क्रान्त:। नकुलोऽपि तं स्वभाववैरिणं मत्वा भ्रातु: रक्षणार्थं सर्पेण सह युद्धवा सर्पं खण्डश: कृतवान्।**

**ततो रूधिराप्लावितवदन: सानन्दं स्वव्यापारप्रकाशनार्थं मातु: सम्मुखो गत:। माताऽपि तं रूधिरक्लिन्नमुखमवलोक्य शंकितचित्ता ''नूनमनेन दुरात्मना दारको मे भक्षित:'' इति विचिन्त्य कोपात्तस्योपरि तं जलकुम्भं चिक्षेप।**

**अनुवाद –** इसके पश्चात् एक दिन चारपाई पर पुत्र को सुलाकर जल का घड़ा लेकर वह पति से बोली– 'हे ब्राह्मण! मैं जल के लिए तालाब पर जाऊँगी। तुम्हें इस पुत्र की नकुल से रक्षा करनी चाहिए।

तब उसके चले जाने पर, ब्राह्मण भी पीछे घर को खाली छोड़कर कहीं भिक्षा के लिए निकल गया। इसी बीच दैवयोग से (एक) काला सर्प बिल से निकला। नकुल ने भी उसको स्वभाव से शत्रु मानकर भाई की रक्षा के लिए सर्प से युद्ध करके सर्प के टुकड़े – टुकड़े कर दिये।

Scanned by CamScanner

तत्पश्चात् खून से सने हुए मुख वाला (वह) आनन्दपूर्वक अपने कार्य को प्रदर्शित करने के लिए (अपनी) माता के सामने गया। शंकित मन वाली माता ने भी रक्त से सने हुए मुख वाले उसको देखकर 'निश्चय ही इस दुरात्मा ने (मेरे) बच्चे को खा लिया है, ऐसा सोचकर क्रोध से उस जल (से भरे) घड़े को उसके ऊपर पटक दिया।

**एवं सा नकुलं व्यापाद्य यावत्प्रलपन्ती गृहे आगच्छति, तावत्सुतस्तथैव सुप्तस्तिष्ठति। समीपे कृष्णसर्पं खण्डशः कृतमवलोक्य पुत्रवधशोकेनात्मशिरो वक्षस्थलं च ताडितुमारब्धा।**

**अत्रान्तरे ब्राह्मणो गृहीतनिर्वापः समायातो यावत्पश्यति, तावत्पुत्रशोकाऽभितप्ता ब्राह्मणी प्रलपति— भो भो लोभात्मन्! लोभाऽभिभूतेन त्वया न कृतं मद्वचः। तदनुभव साम्प्रतं पुत्रमृत्युदुःखवृक्षफलम्। अथवा साध्विदमुच्यते।**

**अनुवाद** = इस प्रकार नकुल को मारकर प्रलाप करती हुई जब वह घर आती है तो (देखती है कि) पुत्र वैसे ही सोया हुआ है। पास में काले साँप को टुकडे – टुकड़े किया हुआ देखकर (नेवले रूप) पुत्र – वधके शोक से (उसने) सिर और छाती को पीटना आरम्भ कर दिया।

इसी बीच भिक्षा प्राप्त किये लौटकर आये हुए ब्राह्मण को जब देखती है, तभी पुत्र – शोक से सन्तप्त (वह) ब्राह्मणी प्रलाप करने लगी – अरे, अरे लोभी! लोभ से वशीभूत हुए तुमने मेरा कहना नहीं माना। इसलिए अब पुत्र की मृत्यु के दुःखरूपी वृक्ष के फल (के स्वाद) को अनुभव करो अथवा यह ठीक ही कहा जाता है –

**अतिलोभो न कर्तव्यो लोभं नैव परित्यजेत्।**
**अतिलोभाऽभिभूतस्य चक्रं भ्रमति मस्तके।।२१।।**

**अन्वयः**— अतिलोभः न कर्तव्यः, न एव लोभं परित्यजेत्। (यतः) अति लोभाभिभूतस्य (मनुष्यस्य) मस्तके चक्रम भ्रमति।।२१।।

**अनुवाद** – अत्यन्त लोभ नहीं करना चाहिए (और) न ही लोभ को (पूर्णतया छोड़ना ही चाहिए, (क्योकि) अत्यधिक लोभ के कारण मस्तक पर चक्र घूमता है।

**व्याकरण बोध :— भ्रमति** = भ्रम् + लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **अतिलोभः** =अति + लुभ् + घञ्। **कर्तव्यः** = कृ + तव्यत्, पु.। **परित्यजेत्** = परि + त्यज् + विधिलिङ्ग, प्रथम पुरूष, एकवचन। **अतिलोभाभिभूतस्य** = अतिलोभेन अभिभूतः (तृतीया तत्पुरूष) तस्य। **लोभम्** = द्वितीया विभक्ति, एकवचन। **अतिलोभाऽभिभूतस्य** = अतिलोभा अभिभूतस्य –पूर्वरूप सन्धि। **मस्तके** = सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **ब्राह्मण – "कथमेतत्" सा प्राह – कस्मिंश्चि–दधिष्ठानें। ब्राह्मण बोला** – "यह कैसे? "

वह (ब्राह्मणी) बोली – किसी स्थान पर

Scanned by CamScanner
Scanned with CamScanner

लोभ विनाश – चक्रधर

## 3. लोभाविष्ट-चक्रधर-कथा

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणपुत्राः परस्परं मित्रतां गता वसन्ति स्म। ते चाऽपि दारिद्र्योपहताः परस्परं चक्रुः– "अहो, धिगियं दरिद्रता। उक्तञ्च –

अनुवाद = किसी स्थान पर आपस में मित्रभाव को प्राप्त हुए चार ब्राह्मण पुत्र रहते थे। निर्धनता से युक्त हुए उन्होंने भी आपस में मन्त्रणा की – अरे! इस दरिद्रता को धिक्कार है। कहा भी गया है –

**वरं वनं व्याघ्रगजादिसेवितं**
**जनेन हीनं बहुकण्टकावृतम्।**
**तृणानि शय्या परिधानवल्कलं न**
**बन्धुमध्ये धनहीनजीवितम्।।२२।।**

**अन्वयः**– व्याघ्रगजदिसेवितम्, जनेन हीनम्, बहुकण्टकावृत्तम् वनम्, तृणानि शय्या, परिधानवल्कलम् वरम् (किन्तु) बन्धुमध्ये धनहीनजीवितम् (वरम्) न।।२२।।

**अनुवाद** – शेर, हाथी आदि के निवास करने वाले स्थान में, लोगों से रहित, बहुत से कांटों से भरा हुआ वन, तिनकों की शय्या (पर सोना) वल्कलवस्त्र (धारण, करना) अच्छा है, (किन्तु) अपने बन्धु – बान्धवों के बीच धनहीन जीवन जीना ठीक नहीं है।

**व्याकरण बोध** :– **जीवितम्** = जीव् + क्त। **सेवितम्** = सेव् + क्त। **जनेन** = तृतीय विभक्ति, एकवचन। **कण्टकावृत्तम** = कण्टक + आवृत्तम्= दीर्घसन्धि। **तृणानि** = तृण् शब्द, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **बन्धुमध्ये** = सप्तमी विभक्ति, एंकवचन। **न** = अव्यय।

**स्वामी द्वेष्टिः सुसेवितोऽपि, सहसा प्रोज्झन्ति सद्बान्धवा,**
**राजन्ते न गुणास्त्यजन्ति तनुजाः, स्फारीभवन्त्यापदः।**
**भार्या साधु सुवंशजाऽपि भजते नो, यान्ति मित्राणि च**
**न्यायारोपितविक्रमाण्यापि नृणां, येषां न हि स्याद्धनम्।।२३।।**

**अन्वयः** – हि येषाम् नृणाम् धनम् न स्यात्, सुसेवितः, अपि स्वामी (तान्) द्वेष्टिः, सद्बान्धवाः अपि सहसा प्रोज्झन्ति। गुणाः न राजन्ते, तनुजाः त्यजन्ति, आपदः स्फारी भवन्ति, सुवंशजा अपि भार्या साधु न भजते। न्यायारोपितविक्रमाणि मित्राणि अपि यान्ति।।२३।

**अनुवाद** – वस्तुतः जिन लोगों के पास धन नहीं होता है, भली प्रकार सेवा किया गया भी स्वामी (उनसे) द्वेष करता है। उत्तम बन्धुजन भी अचानक (उनको) छोड़ देते हैं। गुण (भी)

Scanned by CamScanner

सुशोभित नहीं होते हैं। पुत्र त्याग देते हैं। विपत्तियाँ अत्यधिक बढ़ जाती हैं। उच्चकुल में उत्पन्न हुई भी पत्नी भली प्रकार सेवा नहीं करती है। न्यायोचित मार्ग पर चलने वाले मित्र भी (छोड़कर) चले जाते हैं।

**व्याकरण बोध:— सद्बान्धवा:** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **सुसेवित:** = सु + सेव् + क्त प्रत्यय, प्रथम पुरूष। **प्रोज्झन्ति** = प्र + उज्झ् + लट्, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **राजन्ते** = राज् (दीप्तौ) + लट्, प्रथम पुरूष, बहुवचन, आत्मने पद। **त्यजन्ति** = त्यज् + लट् लकार, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **भजते** = भज् + लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **स्फारीभवन्ति** = स्फार् + च्वि + भू + लट्, प्रथम पुरूष। **यान्ति** = इण् (गतौ) + प्रथम पुरूष, बहुवचन। **सुवंशजाऽपि** = सुवंशजा अपि (पूर्वरूप सन्धि)। **मित्राणि** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **येषाम्** = यत् शब्द, षष्ठी विभक्ति, बहुवचन। **गुणा:** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **भवन्त्यापद** = भवन्ति + आपद = (यण सन्धि)।

**शूर: सुरूप: सुभगश्च वाग्मी, शस्त्राणि विदाङ्करोतु।**
**अर्थं विना नैव यशश्च मानं, प्राप्नोति मर्त्योऽत्र मनुष्यलोके।।२४।।**

**अन्वय:** — मर्त्य: अत्र मनुष्यलोके शूर: सुरूप: सुभग: शस्त्राणि — वाग्मी विदाङकरोतु, (किन्तु) अर्थम् विना यश: मानम् च नैव प्राप्नोति।।२४।।

**अनुवाद** — इस मनुष्य लोक में व्यक्ति पराक्रमी, सुन्दर, सौभाग्यशाली, शस्त्रज्ञान तथा वाणी की चतुरता को तो प्राप्त लेता है, (किन्तु) धन के बिना यश तथा मान को प्राप्त नहीं करता है।

**व्याकरण बोध** — **करोतु** = लोट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **प्राप्नोति** = प्र + आप् + लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **मनुष्यलोके** = मनुष्याणां लोक: (षष्ठी तत्पुरूष)। **मर्त्य:** = मर्त् + यत्, प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **शूर:, सुरूप:, सुभग** = प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **शस्त्राणि** = प्रथमा विभक्ति — बहुवचन। **विदाङरोतु** = **विदाम् करोतु** = अनुस्वार सन्धि। **मनुष्य लोके** = सप्तमी विभक्ति, एकवचन।

**तानीन्द्रियाण्यविकलानि तदेव नाम,**
**सा बुद्धिरप्रतिहता, वचनं तदेव।**
**अर्थोष्मणा विरहित: पुरूष: स एव,**
**बाह्य: क्षणेन भवतीति विचित्रमेतत्।।२५।।**

**अन्वय:**— तानि एव अविकलानि इन्द्रियाणि, तत् एव नाम सा (एव) अप्रतिहता बुद्धि: तत् एव वचनम्, (तथापि) अर्थोष्मणा विरहित: स: एव पुरूष: क्षणेन बाह्य: भवति, इति एतत् विचित्रम् (अस्ति)।।२५।।

Scanned by CamScanner

**अनुवाद** – वे ही विकलता स्वस्थ्य इन्द्रियाँ हैं, वही वस्तुत:नाम है, वही बिना रोक टोक जाने वाली बुद्धि (है), वही वचन है, (फिर भी) धन की गर्मी से रहित वही पुरूष क्षणभर में अन्य हो जाता है, यह विचित्र (है)।

**व्याकरण बोध :** – **अविकलानि** = न विकलानि, इति (नञ् समास)। **अप्रतिहता** = न प्रतिहता, इति (नञ् समास)। **अर्थोष्मणा** = अर्थस्य उष्मा, तया (षष्ठी तत्पुरूष) ,तृतीया विभक्ति एकवचन। **त्वन्य:** = तु + अन्य:–यण सन्धि। **वचनम्** = वच् + ल्युट्, प्रथमा विभक्ति, एकवचन, नपुंसकलिंग। **तनि इन्द्रियाणि** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **सा** = तत् शब्द, प्रथम विभक्ति, एकवचन, स्त्रीलिंग। **बुद्धिरप्रतिहता** = बुद्धि: + अप्रतिहता– विसर्ग सन्धि। **अर्थोष्मणा** = अर्थ उष्णमा = गुण सन्धि।

**तद्गच्छाम: कुत्रचिदर्थाय। इति सम्मन्त्र्य स्वदेशं पुरञ्च, स्वसुहृत्सहितगृहञ्च परित्यज्य प्रस्थिता:। अथवा साध्विमुच्यते** –

**अनुवाद** – तो धन कमाने के लिए कहीं भी चलते हैं, इस प्रकार विचार कर अपने देश तथा नगर एवं मित्रों सहित घर को छोड़कर चल दिये। अथवा यह ठीक ही कहा जाता है–

**सत्यं परित्यजति मुञ्चति बन्धुवर्गं,**
**शीघ्रं विहाय जननीमपि जन्मभूमिम्।**
**सन्त्यज्य गच्छति विदेशमभीष्टलोकं,**
**चिन्ताकुलीकृतमति: पुरूषोऽत्र लोके।।२६।।**

**अन्वय:** – अत्र लोके चिन्ताकुलीकृतमति: पुरूष सत्यम् परित्यजति, बन्धुवर्गम् मुञ्चति, जननीम् अपि विहाय, अभीष्टलोकम् संत्यज्य शीघ्रम विदेशम् गच्छति।।१२।।

**अनुवाद** :– इस संसार में आर्थिक चिन्ता से व्याकुल बुद्धि वाला व्यक्ति सत्य को त्याग देता है, बन्धुबान्धव छोड़ देते हैं, माता को भी छोड़कर (तथा) अत्यधिक अच्छे लगने वाले स्थान को छोड़कर के शीघ्र ही परदेश में चला जाता है।

**व्याकरण बोध:** – **विहाय** = वि + हा + ल्यप्। **परित्यजति** = परि + त्यज् + लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **मुञ्चति** =मुञ्च् + लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **संत्यज्य** = सम् + त्यज् + ल्यप्। **अभीष्टलोकम्** = अभीष्टं लोकं (कर्मधारय) अभि + इष् + क्त। **चिन्ताकुलीकृतमति:** = चिन्तया आकुल: (तृतीया तत्पुरूष)। चिन्ताकुल: चिन्तया आकुली कृता मति: यस्य स: (बहुव्रीहि)। **सत्यम्** = द्वितीय विभक्ति, एकवचन। **गच्छति** = गम् धातु, लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **लोके** = सप्तमी विभक्ति, एकवचन।

Scanned by CamScanner

एवं क्रमेण गच्छन्तोऽवन्तीं प्राप्ता। तत्र शिप्राजले कृतस्नाना महाकालं प्रणम्य यावन्निर्गच्छति तावद् भैरवानन्दो नाम योगी सम्मुखो बभूव। ततस्तं ब्राह्मणोचित विधिना सम्भाव्य, तेनैव सह तस्य मठं जग्मुः। अथ तेन पृष्टाः — ''कुतो भवन्तः समायाताः? क्व यास्यथ? किम्प्रयोजनम्?

ततस्तैरभिहितम् — ''वयं सिद्धियात्रिकाः, तत्र यास्यामो यत्र धनाप्तिर्मृत्युर्वा भविष्यतीत्येष निश्चयः। उक्तश्च —

**अनुवाद** — इस प्रकार एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हुए अवन्ती में पहुँचे। वहाँ शिप्रा नदी के जल में स्नान करके, महाकाल को प्रणाम करके जैसे ही निकले, वैसे ही भैरवानन्द नामक योगी से (उनका) सामना हुआ। तब ब्राह्मणोचित विधि द्वारा उसका सम्मान करके, उसी के साथ उसके मठ में गए। तब उसने पूछा — आप कहाँ से आये हैं? कहाँ जाएँगे? क्या उदेश्य है? तब उन्होंने कहा — हम 'सिद्धियात्री'' हैं, वहाँ जाऐंगे जहाँ धन की प्राप्ति अथवा मृत्यु होगी, बस यही निश्चय है। कहा भी गया है —

**दुष्प्राप्यानि बहूनि च लभ्यन्ते वांछितानि द्रविणानि।**
**अवसरतुलिताभिरलं तनुभिः साहसिकपुरूषाणाम्।।२७।।**

**अन्वयः**— साहसिकपुरूषाणाम् अलम् अवसरतुलिताभिः तनुभिः वांछितानि दुष्प्राप्याणि बहुनि द्रविणानि च लभ्यन्ते।।२७।।

**अनुवाद** — साहसिक लोग उचित समय पर दाँव पर लगाए गए शरीरों से कठिनता से प्राप्त करने योग्य बहुत से धनों को प्राप्त कर लेते हैं, उसी के साथ उनकी इच्छित वस्तुएँ भी प्राप्त हो जाती है।

**व्याकरण बोधः — लभ्यन्ते** = लभ् + लट् लकार, आत्मने पद, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **वांछितानि** = वांछ् + क्त, नपुंसक लिंग, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **दुष्प्राप्याणि** = दुस् + प्र + आप् (प्रापणे) + ण्यत्, नपुंसक लिंग, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **अवसरतुलिताभिः** = अवसरे तुलिता (सप्तमी तत्पुरूष) ताभिः। **तनुभिः** = तृतीया विभक्ति, बहुवचन। **बहूनि** = लट् लकार, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **पुरूषाणाम्** = षष्ठी विभक्ति, बहुवचन।

**पतति कदाचिन्नभसः खाते पातालतोऽपि जलमेति।**
**दैवमचिन्त्यं बलवद् बलवान्नु पुरूषकारोऽपि।।२८।।**

**अन्वयः**— कदाचित् जलम् नभसः खाते पतति (कदाचित्) पातालतः अपि एति। (अतः) अचिन्त्यम् दैवम् बलवत् ननु पुरूषकारः अपि बलवान् (भवति)।। १८।।

Scanned by CamScanner

**अनुवाद** — कभी जल आकाश से जलाशय में गिरता है (तथा कभी) पाताल से भी आता है, (इसलिए) नि:सन्देह भाग्य (तो) बलवान् होता (ही) है, किन्तु पुरूषार्थ भी बलवान् (होता है)।

**व्याकरण बोध:— पातालत:—** पाताल + तसिल् प्रत्यय। **अचिन्त्यम्** = न चिन्त्यम्, इति (नञ् समास) चिन्त् + ण्यत्। **दैवम्** = देव + अण्। **एति** =इण् + लट् लकार, प्रथम पुरूष एकवचन। **बलवान्** = बल + वतुप्, प्रथम विभक्ति, एकवचन। **खाते** = खन् + क्त, सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **पतति** = पत् धातु, लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **पातालतोऽपि** = पातालतो अपि —पूर्वरूप सन्धि। **ननु, अपि** = **अव्यय।**

**अभिमतसिद्धिरशेषा भवति हि पुरूषस्य पुरूषकारेण।**
**दैवमिति यदपि कथयसि पुरूषगुण: सोऽप्यदृष्टाख्य:।।२९।।**

**अन्वय:—** पुरूषकारेण हि अशेषा अभिमतसिद्धि: भवति। यत् अपि 'दैवम्' इति कथयसि, स: अपि अदृष्ट — आख्य: पुरूषगुण: (एव)।।२९।।

**अनुवाद** — पुरूषार्थ के द्वारा ही सम्पूर्ण इच्छित पदार्थों की प्राप्ति होती है। साथ ही (तुम) जिसे 'दैव' इस रूप में कहते हो वह भी (तो) न दिखाई देने वाला पुरुष का ही गुण होता है।

**व्याकरण बोध:— सोऽप्य** = सो + अपि = पूर्वरूप सन्धि। **हि, इति, अपि** = अव्यय। **कथयसि** = कथ् + लट् लकार, मध्यम पुरूष, एकवचन। **अभिमतासिद्धि:** = अभिमत: सिद्धि: (षष्ठी तत्पुरूष)। **भवति** = भू + लट् लकार + प्रथम पुरूष, एकवचन। **अभिमतसिद्धिरशेषा** = अभिमतसिद्धि: + अशेषा: —विसर्ग सन्धि। **पुरूषस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **पुरूषकारेण** = तृतीया विभक्ति, एकवचन। **दैवम्** = द्वितीया विभक्ति, एकवचन।

**द्वयमतुलं गुरूलोकात्तृणमिव तुलयन्ति साधु साहसिका:।**
**प्राणानद्भुतमेतच्चरितं चरितं ह्युदाराणाम्।।३०।।**

**अन्वय:—** साहसिका: प्राणान् तृणम् इव साधु तुलयन्ति, हि एतत् अद्भुतम् चरितम् च उदाराणाम् चरितम् द्वयम् लोकात् गुरू: च अतुलम् भवति।।३०।।

**अनुवाद** = साहसी लोग प्राणों को तिनके के समान समझकर दाँव पर लगा देते हैं। वस्तुत: (उनका) यह आश्चर्यजनक साहस एवं उदार लोगों का आचरण दोनों (ही) सामान्य लोगों की अपेक्षा महत्वपूर्ण एवं अनुपम होता है।

**व्याकरण बोध:—तुलयन्ति** = तुल् +णिच् + लट्, लट् लकार, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **साहसिका:** = साहस + ठक्, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **गुरूलोकात्**—पंचमी विभक्ति, एकवचन। **प्राणान्** = द्वितीय विभक्ति, बहुवचन। **उदाराणाम्** = षष्ठी विभक्ति, बहुवचन। **इव** = अव्यय। **एतच्चरितम्** = एतत् चरितम् = व्यंजन सन्धि। **ह्युदाराणाम्** = हि + उदाराणाम्— यण सन्धि।

Scanned by CamScanner

**क्लेशस्याङ्गमदत्त्वा सुखमेव सुखानि नेह लभ्यन्ते।**

**मधुभिन्मथनायस्तैराश्लिष्यति बाहुभिर्लक्ष्मीम्।।३१।।**

**अन्वयः**— इह अङ्गम् क्लेशस्य अदत्वा सुखम् सुखानि न लभ्यन्ते, (कुतः) मधुभित् मथन — आयस्तैः बाहुभिः एव लक्ष्मीम् आश्लिष्यति।।३१।।

**अनुवाद**— इस संसार में शरीर को कष्ट दिये बिना आसानी से सुख प्राप्त नहीं किये जाते हैं, (क्योंकि) भगवान् विष्णु (समुद्र) मन्थन से थकी हुई भुजाओं द्वारा ही लक्ष्मी का आलिङ्गन करते हैं।

**व्याकरण बोधः** — **अदत्त्वा** = न दत्वा इति। (नञ् समास) नञ् + दा + क्त्वा प्रथम पुरूष एकवचन। **आश्लिष्यति** = आ + श्लिष् + लृट लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **लभ्यन्ते** = लभ् + णिच् लट् आत्मनेपद, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **क्लेशस्य** = षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **सुखानि** =प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **नेह** = न + इह =गुण सन्धि। **मथनाय** = चतुर्थी विभक्ति, एकवचन। **तैः** =तत् शब्द, तृतीया विभक्ति, बहुवचन। **बाहुभिः** =तृतीया विभक्ति, बहुवचन।

**तस्य कथं न चला स्यात् पत्नी विष्णोर्नृसिंहकस्याऽपि।**

**मासांश्चतुरो निद्रां य सेवति जलगतः सततम्।।३२।।**

**अन्वयः**— नृसिंहस्य विष्णोः पत्नी अपि कथम् चला न स्यात्। यः चतुरः मासान् सततम् जलगतः सन् निद्राम् सेवति।।३२।।

**अनुवाद**— नृसिंह अवतार भगवान् विष्णु की भी पत्नी क्यों चंचल नहीं होगी। जो चार महीनों तक निरन्तर जल में स्थित हुए निद्रा का सेवन करते हैं।

**व्याकरण बोधः** — **निद्राम्** = द्वितीया विभक्ति, एकवचन। **सततम्** = अपि = अव्यय। **नृसिंहस्य** = नृषु सिंह (सप्तमी तत्पुरूष) तस्य। **स्यात्** = अस् + विधिलिङ्, प्रथम पुरूष, एकवचन। **जलगतः** = जले गतः (सप्तमी तत्पुरूष) (गम् + क्त + गतः)। **सेवति** = सेव् धातु, लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **तस्य** = तत् शब्द, षष्ठी विभक्ति, एकवचन। **विष्णोर्नृसिंहस्य** = विष्णोः नृसिहंकस्य = विसर्ग सन्धि। **यः** = यत् शब्द, प्रथमा विभक्ति, एकवचन।

**दुरधिगमः परभागो यावत्पुरूषेण साहसं न कृतम्।**

**जयति तुलामधिरूढो भास्वानिह जलदपटलानि।।३३।।**

**अन्वयः**— यावत् पुरूषेण साहसं न कृतम्, (तावत्) परभागः, दुरधिगमः, इह भास्वान् तुलाम अधिरूढः (एव) जलद — पटलानि जयति।।३१।।

**अनुवाद**— जब तक पुरूष साहस नहीं करता है, तब तक ही विजय प्राप्ति दुर्लभ होती है। इस संसार मे तेजस्वी सूर्य (भी) तुलाराशि पर आरूढ़ होकर ही बादलों के समूह पर विजय प्राप्त करता है।

Scanned by CamScanner

**व्याकरण बोध :– कृतम्** = कृ + क्त। **परभागः** = परेषां भागः (षष्ठी तत्पुरूष) परः उत्कृष्टः भागः गुणः (कर्मधारय) वा। **जयति** =जि + लट्, प्रथम पुरूष एकवचन। **दुरधिगमः** = दुरः + अधि + गम् + घञ्। **यावत्** = अव्यय। **अधिरूढ़ः** = अधि + रूह् + क्त। **जलदपटलानि** = जलदानां पटलम् (षष्ठी तत्पुरूष) तानि। **पुरूषेण** = तृतीया विभक्ति, एकवचन।

**तत्कथ्यतामस्माकं कश्चिद्धनोपायो विवरप्रवेशशाकिनी साधनश्मशानसेवन–महामांसविक्रयसाधकवर्तिप्रभृतीनामेकतम' इति। अद्भुतशक्तिर्भवान श्रूयते। वयमप्यति–साहसिका। उक्तञ्च–**

**अनुवाद** – जो हमें पाताल–प्रवेश, यक्षिणी की सिद्धि, श्मशानसेवन, मनुष्यादि के माँस का विक्रय,सिद्धवर्तिका आदि साधनों में से कोई एक (धन प्राप्ति का) उपाय बताइये। आप तो अद्भुतशक्ति सम्पन्न सुने जाते हैं। हम भी अत्यधिक साहसी हैं। कहा भी गया है –

**महान्त एव महतामर्थं साधयितुं क्षमाः।**
**ऋते समुद्रादन्यः को बिभर्ति वडवाऽनलम्।।३४।।**

**अन्वयः–** महान्तः एव महताम् अर्थम् साधयितुम् क्षमाः। समुद्रात् ऋते अन्यः कः वडवानलम् बिभर्ति।।३४।।

**अनुवाद** – बड़े लोग ही महान् व्यक्तियों के प्रयोजन को सिद्ध करने में समर्थ होते हैं क्योंकि समुद्र के अतिरिक्त अन्य कौन (भला) वडवानल को धारण करता है।

**व्याकरण बोधः** – **महताम्** = द्वितीया विभक्ति, एकवचन। **साधयितुम्** = साध् + णिच् + तुमुन प्रथमा विभक्ति। **महान्तः** = महत् + जस्, प्रथमा विभक्ति। **बिभर्ति** = भृ + लट्, प्रथम पुरूष, एकवचन। **समुद्रात्** = पंचमी विभक्ति, एकवचन। **कः** = किम् शब्द, प्रथमा विभक्ति, एकवचन।

**भैरवानन्दोऽपि तेषां सिद्धयर्थं बहूपायं सिद्धवर्तिचतुष्टयं कृत्वाऽर्पयत। आह च–''गम्यतां हिमालयदिशि तत्र सम्प्राप्तानां यत्र वर्तिः पतिष्यति, तत्र निधानमसंदिग्ध प्राप्स्यथ। तत्र स्थानं खनित्वा निधिं गृहीत्वा व्याघुट्यताम्।''**

**तथाऽनुष्ठिते तेषां गच्छतामेकतमस्य हस्ताद्वर्तिर्निपपात। अथाऽसौ यावत्तं प्रदेशं खनति तावत्ताम्रमयी भूमिः। ततस्तेनाऽभिहितम्–''अहो,गृह्यतां स्वेच्छया ताम्रम्।''**

**अन्ये प्रोचुः–''भो मूढ! किमनेन क्रियते यत् प्रभूतमपि दारिद्र्यं न नाशयति। तदुत्तिष्ठ, अग्रतो गच्छामः।''**

Scanned by CamScanner

**सोऽब्रवीत्—''यान्तु भवन्तः। नाऽहमग्रे यास्यामि।'' एवमभिधाय ताम्रं यथेच्छया गृहीत्वा प्रथमो निवृत्तः।**

अनुवाद— भैरवानन्द ने भी उनकी सिद्धि हेतु अत्यन्त प्रयत्नपूर्वक चार सिद्धिवर्तिकाओं का निर्माण करके उन्हें दिया और कहा — हिमालय की दिशा में चले जाओ। वहाँ पहुँचने पर तुम्हारी जहाँ वर्तिका गिरेगी, (तुम सब) वहाँ निःसेदह खजाना प्राप्त करोगे। उस स्थान को खोदकर धन लेकर लौट जाना।

वैसा करने पर जाते हुए उनमें से एक के हाथ से वर्तिका गिर पड़ी। इसके पश्चात् जैसे ही उस स्थान को खोदा, वैसे ही (उसे) ताम्रमयी भूमि (दिखाई दी)। तब उसने कहा 'अरे! इच्छानुसार ताँबा ग्रहण कर लो।'

दूसरे बोले — अरे मूर्ख! इस (ताँबे) के द्वारा क्या किया जा सकता है? क्योंकि (यह) अत्यधिक होते हुए भी निर्धनता को नष्ट नहीं करता है। इसलिए उठो (हम) आगे चलते हैं।''

वह बोला—''आप सब जाइये। मैं आगे नहीं जाऊँगा।'' इस प्रकार कहकर इच्छानुसार ताँबा लेकर पहला (ब्राह्मण) लौट गया।

**ते त्रयोऽपि अग्रे प्रस्थिताः। अथ किञ्चिन्मात्रं गतस्याऽग्रेसरस्य वर्तिर्निपपात। सोऽपि यावत्खनितुमारब्धस्तावद्रूप्यमयी क्षितिः। ततः प्रहर्षितः प्राह—यद् ''भो भो, गृह्यतां यथेच्छया रूप्यम्! नाग्रे गन्तव्यम्।''**

**तावूचतुः ''भोः, पृष्ठतस्ताम्रमयी भूमिः, अग्रतो रूप्यमयी। तन्नूमग्रे — सुर्वणमयी भविष्यति। किञ्चाऽनेन प्रभूतेनाऽपि द्रारिद्र्यनाशो न भवति। तदावामग्रे यास्यावः।'' एवमुक्त्वा द्वावप्यग्रे प्रस्थितौ।**

**सोऽपि स्वशक्तया रूप्यमादाय निवृत्तः।**

**अथ तयोरपि गच्छतोरेकस्याऽग्रे वर्तिः पपात्। सोऽपि प्रहष्टो यावत्खनति, तावत्सवर्णभूमिं दृष्ट्वा द्वितीयां प्राह—''भोः गृह्यतां स्वेच्छया सुवर्णम्। सुवर्णादन्यन्न किञ्चिदुत्तमं भविष्यति।''**

**अनुवाद** — वे तीनों भी आगे चल पड़े। इसके पश्चात् कुछ ही आगे गए तब आगे चले वाले (ब्राह्मण) की वर्तिका (भी) गिर पड़ी। उसने भी जब खोदना प्रारम्भ किया तो (उसे) रजतमयी भूमि (दिखायी दी)। तत्पश्चात् अत्यधिक प्रसन्न हुआ (वह) बोला — कि अरे! रे। इच्छानुसार चाँदी ले लो। (अब) आगे नहीं चलना चाहिए।

वे दोनों बोले — अरे! पीछे ताँबे की भूमि थी (तथा) आगे चाँदी की। तो निश्चय ही आगे स्वर्णमयी (भूमि) होगी। [illegible] ही अत्यधिक इस (चाँदी) के द्वारा निर्धनता का नाश तो होगा

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

नहीं। इसलिए हम दोनों आगे चलते हैं। इस प्रकार कहकर वे दोनों भी आगे चल दिये। वह भी अपनी सामर्थ्य के अनुसार चाँदी लेकर लौट गया।

इसके पश्चात् उन दोनों में से भी जाते हुए एक के आगे वर्तिका गिर पड़ी। प्रसन्न हुए उसने भी जब खोदा, तो स्वर्णमयी भूमि को देखकर दूसरे से बोला – "अरे! इच्छानुसार सोना ले लो। अन्य कुछ भी सोने से उत्तम नहीं होगा।

**स प्राह: –"मूढ! न किञ्चितद्वेत्सि! प्राक्ताम्र:, ततो रूप्यं, तत: सुवर्णम्। तन्नूनमत: परं रत्नानि भविष्यन्ति, येषामेकतमेनाऽपि दारिद्र्यनाशो भवति। तदुत्तिष्ठ: अग्रे गच्छाव:। किमेनेन भारभूतेनाऽपि प्रभूतेन?"**

**स आह – "गच्छतु भवान्। अहमत्र स्थितस्त्वां प्रतिपालयिष्यामि।"**

**तथाऽनुष्ठिते, सोऽपि गच्छन्नेकाकी, ग्रीष्माऽर्कप्रतापसन्तप्ततनु: पिपासाकुलित: सिद्धिमार्गच्युत इतश्चेतश्च बभ्राम।**

**अथ भ्राम्यन्, स्थलोपरि पुरूषमेकं रूधिरप्लावितगात्रं भ्रमच्चक्रमस्तकमपश्यत्। ततो द्रुततरं गत्वा तमवोचत् – "भो:, को भवान्? किमेवं चक्रेण भ्रमता शिरसि तिष्ठसि? तत्कथय मे यदि कुत्रचिज्जलमस्ति।"**

**एवंतस्य प्रवदतस्तच्चक्रं तत्क्षणात्तस्य शिरसो ब्राह्मणस्तके चटितम्।**

अनुवाद – उसने कहा "मूर्ख! (तुम) कुछ नहीं जानते हो। पहले ताँबा, फिर चाँदी उसके बाद सोना। इसलिए निश्चय ही इसके पश्चात् रत्न होंगे, जिसमें से एक अकेले के द्वारा भी दरिद्रता नष्ट हो जाती है। तो उठो, आगे चलते हैं। भारस्वरूप अत्यधिक मात्रा वाले इससे भी भला क्या (लाभ)?

उसने कहा – "आप जाइये। यहाँ रहकर मैं आपकी प्रतीक्षा करूँगा।"

वैसे करने पर, अकेला जाता हुआ ग्रीष्म ऋतु के सूर्य के तेज से सन्तप्त शरीर वाला, प्यास से व्याकुल हुआ, सिद्धिमार्ग से भटककर वह भी इधर – उधर घूमने लगा।

तत्पश्चात घूमते हुए (उसने) खून से लथपथ शरीर वाले, घूमते हुए चक्र से युक्त मस्तक वाले एक व्यक्ति को देखा। उसके पश्चात् शीघ्रतापूर्वक जाकर उससे बोला – 'अरे! आप कौन हैं। सिर पर घूमते हुए चक्र से युक्त इस प्रकार क्यों खडे है? यदि कहीं जल है, तो मुझे बताइये।"

उसी क्षण वह चक्र उस (व्यक्ति) के सिर से इस प्रकार कहते हुए उस (ब्राह्मण) के मस्तक पर चढ़ गया।

Scanned by CamScanner

स आह – "भद्र! किमेतत्?"

स आह –"ममाऽप्येवमेतच्छिरसि चटितम्।"

स आह–"तत्कथय कदैतदुत्तरिष्यति? महती मे वेदना वर्तते।"

स आह –"यदा त्वमिव कश्चिद्धृतसिद्धवर्तिरेवमागत्य, त्वमालापयिष्यति, तदा तस्य मस्तकं चटिष्यति।"

स आह – "कियान्कालस्तवैवं स्थितस्य?"

स आह –" साम्प्रतं को राजा धरणीतले?"

स आह–"वीणा वादनपटुः वत्सराजः।"

अनुवाद – वह बोला – "भाई! वह क्या है?"

उस (व्यक्ति) ने कहा–"मेरे भी सिर पर यह इसी प्रकार चढ़ गया था।"

वह बोला–"जरा कहिये, यह कब उतरेगा? मुझे अत्यधिक पीड़ा हो रही है।"

उस (व्यक्ति) ने कहा – "जब तुम्हारे समान सिद्धिवर्तिका धारण किया हुए कोई इसी प्रकार आकर तुम्हारे साथ वार्तालाप करेगा, तब (यह) उसके मस्तक पर चढ़ जायेगा।"

वह बोला – "इस प्रकार खड़े हुए तुम्हें कितना समय हुआ था?"

उस व्यक्ति ने कहा – "इस समय पृथ्वीतल पर कौन राजा है?"

वह बोला – "वीणा (वादक) वत्सराज।"

स आह –"अहं तावत्कालसङ्ख्यां न जानामि। परं यदा रामो राजासीत्तदाऽहं दारिद्र्योपहतः सिद्धवर्तिमादायानेन पथा समायातः। ततो मयाऽन्यो नरो मस्तकधृतचक्रो दृष्टः, पृष्टश्च। ततश्चैतज्जातम्।"

स आह – "भद्र! कथं तदैवं स्थितस्य भोजनजलप्राप्तिरासीत्?"

स आह – "भद्र! धनदेन निधानहरणभयात्सिद्धानामेतच्चक्रपतनरूपं भयं दर्शितम्। तेन कश्चिदपि नागच्छति। यदि कश्चिदायाति, स क्षुत्पिपासानिद्रारहितो, जरामरणवर्जितः केवलमेवं वेदनामनुभवति इति। तेदाज्ञापय मां स्वगृहाय।" इत्युक्त्वा गतः।

अनुवाद – उस (व्यंक्ति) ने कहा – "काल की गणना तो मैं नहीं जानता हूँ।, किन्तु जब राम राजा थे, दरिद्रता के कारण से मैं तब सिद्धिवर्तिका लेकर इसी मार्ग से आया था। तब मैंने (भी यहाँ) अन्य व्यक्ति को मस्तक पर चक्र धारण किये हुये देखा था और पूछा था तथा उसके बाद ही यह हो गया था।

Scanned by CamScanner

वह बोला – भाई! इस प्रकार स्थित हुए तुम्हे जल एवं भोजन की प्राप्ति किस प्रकार होती थी?

उस (व्यक्ति) ने कहा – भाई। खजाना चुराए जाने के डर से सिद्धों के लिए कुबेर ने चक्रपतनरूप यह भय दिखाया है। इस कारण (यहाँ) कोई भी नहीं आता है (और) यदि कोई आता (भी) है (तो) भूख – प्यास एवं निद्रा से रहित, वृद्धावस्था तथा मरने से मुक्त वह इसी प्रकार केवल पीड़ा का अनुभव करता है। तो मुझे अपने घर (जाने) के लिए आज्ञा प्रदान कीजिए।'' इतना कहकर चला गया।

**तस्मिंश्चिरयति स सुवर्णसिद्धिस्तस्याऽन्वेषणपरस्तत्पदपङ्क्त्या यावत् किञ्चिद् वनान्तरमागच्छति, तावद्रुधिरप्लावितशरीरस्तीक्ष्णचक्रेण मस्तके भ्रमता सवेदनः क्वणन्नुपविष्ठतीति ददर्श। ततः तत्समीपवर्तिना भूत्वा, सवर्थि पृष्टः—'भद्र! किमेतत्?''**

**स आह – ''विधिनियोगः।''**

**स आह – ''कथन्तत्? कथय कारणमेतस्य।''**

**सोऽपि तेन पृष्टः, सर्वचक्रवृत्तान्तमकथयत्।**

**तच्छ्रुत्वाऽसौ तं विगर्हयन्निदमाह—''भो! निषिद्धस्त्वं मयाऽनेकशो, न श्रृणोषि में वाक्यम्। तत्किं क्रियते। विद्यावानपि, कुलीनोऽपि बुद्धिरहितः। अथवा साध्विदमुच्यते –**

**अनुवाद** – उसके देर करने पर उसको खोजने में लगा वह सुवर्णसिद्धि उसके पैरों के चिन्हों के अनुसार जैसे ही कुछ वन के अन्दर आया, वैंसे ही खुन से लथपथ शरीर वाले, मस्तक पर घूमते हुए तीक्ष्णचक्र से युक्त अत्यधिक पीड़ित रोते हुए (उस) को बैठा हुआ विराजमान है, इस प्रकार देखा। तब उसके पास जाकर, अश्रुयुक्त होकर पूछा –'भाई यह क्या है?''

वह बोला –''भाग्य ही विडम्बना है।'' की

उस (सुवर्णसिद्धि) ने कहा – ''वह कैसे? इसका कारण कहिए।''

उसके द्वारा पूछे गए उसने भी सम्पूर्ण चक्रविषयक घटनाक्रम कह डाला।

उसको सुनकर उसकी निन्दा करते हुए उसने यह कहा –''अरे! मैंने तुम्हें अनेक बार रोका था। (तुम) मेरी बात नहीं सुनते हो। तो क्या किया जाए! विद्वान् होते हुए भी, उच्चकुलोत्पन्न भी (तुम) बुद्धिहीन हो। अथवा यह ठीक ही कहा जाता है –

**वरं बुद्धिर्न सा विद्या विद्यया बुद्धिरूत्तमा।**
**बुद्धिहीना विनश्यन्ति तथा ते सिंहकारकाः।।३५।।**

**अन्वय:**— बुद्धिः वरम्, सा विद्या न, विद्यया बुद्धिः उत्तमा, बुद्धिहीनाः (तथा) विनश्यन्ति यथा ते सिंहकारकाः।। ३५।।

**अनुवाद**— बुद्धि श्रेष्ठ है, वह विद्या नहीं, विद्या से बुद्धि उत्तम है। बुद्धिरहित (उसी प्रकार) विनष्ट हो जाते हैं, जिस प्रकार सिंह का निर्माण करने वाले वे (ब्राह्मण लोग नष्ट हो गए)।

**व्याकरण बोध: — बुद्धिः** = बुध् + क्तिन् प्रत्यय, प्रथम पुरूष, एकवचन। **विनश्यन्ति** = वि + नश् + लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **सिंहकारकाः** = सिंहस्य कारकः (षष्ठी तत्पुरूष) ते, प्रथमा विभक्ति बहुवचन। **बुद्धिर्न** = बुद्धिः + न= विसर्ग सन्धि। **विद्यया** =तृतीया विभक्ति, एकवचन। **बुद्धिरूत्तमाः** = बुद्धिः + उत्तमा— विसर्ग सन्धि। **ते** = तत् शब्द, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन।

**चक्रधर आह — "कथमेतत्?"**

चक्रधर ने पूछा यह कैसे ? तब सुर्वणसिद्धि ने कहा—

Scanned by CamScanner

चक्रधर ने पूछा यह ...

# 4. सिंहकारक -मूर्खब्राह्मण -कथा

''कस्मिंश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्रह्मणपुत्राः परस्परं मित्रभावमुपगता वसन्ति स्म। तेषां त्रयः शास्त्रपारङ्गता, परन्तु बुद्धिरहिताः। एकस्तु बुद्धिमान् केवलं शास्त्रपराङ्मुखः। अथ तैः कदाचिन्मित्रैर्मन्त्रितं—''को गुणो विद्यायाः, येन देशान्तरं गत्वा भूपतीन् परितोष्याऽर्थोपार्जनः न क्रियते, तत्पूर्वदेशं गच्छामः।

तथाऽनुष्ठिते किञ्चिन्मार्गं गत्वा, तेषां ज्येष्ठतरः प्राह—''अहो, अस्माकमेकश्चतुर्थो मूढः केवलं बुद्धिमान्। न च राजप्रतिग्रहो बुद्ध्या लभ्यते, विद्यां विना। तन्नास्मै स्वोपार्जितं दास्यामि तद्गच्छतु गृहम्।''

ततो द्वितीयेनाऽभिहितम्—''भोः सुबुद्धे! गच्छ त्वं स्वगृहे, यतस्ते विद्या नास्ति। ततस्तृतीयेनाऽभिहितम्—'अहो न युज्यते एवं कुर्तम्' यतो वयं बाल्यात्प्रभृत्येकत्र क्रीडिताः। तदागच्छतु महाऽनुभावोऽस्मदुपार्जितवित्तस्य समभागी भविष्यतीति। उक्तञ्च—

अनुवाद— किसी स्थान पर मित्र रूप में चार ब्राह्मणपुत्र रहते थे। उनमें से तीन शास्त्रों मे पराङ्गत, किन्तु बुद्धिहीन थे (तथा) एक केवल बुद्धिमान्, किन्तु शास्त्रज्ञान से रहित था। इसके पश्चात् उन सभी मित्रों ने कभी (आपस में) विचार किया — (उस) विद्या से क्या लाभ? जिसके द्वारा दूसरे देशों में जाकर राजाओं को सन्तुष्ट करके धनोपार्जन न किया जाए। इसलिए पूर्व के देश की ओर चलते हैं।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

वैसा करने पर कुछ दूर जाकर, उनमें से सबसे बड़ा बोला – "अरे हममे से एक चौथा मूर्ख है, केवल बुद्धियुक्त है तथा राजा की कृपा विद्या के बिना (केवल) बुद्धि द्वारा प्राप्त नहीं होती है। इसलिए अपने द्वारा कमाया हुआ धन मैं इसे नहीं दूँगा। अत:(यह) घर लौट जाये।

तब दूसरे ने कहा – "अरे! सुबुद्धि, तुम अपने घर जाओ, क्योंकि तुम्हारे पास कोई विद्या नहीं है।" पुन: तीसरे ने कहा – " अरे! इस प्रकार करना ठीक नहीं है, क्योंकि बाल्यकाल से लेकर हम एक साथ खेले हैं। तो (यह) महानुभाव भी (हमारे साथ) आये (यह भी) हमारे द्वारा कमाए हुए धन में समान भागी होगा कहा भी गया है–

**किन्तया क्रियते लक्ष्म्या या वधुरिव केवला।**
**या न वेश्येव सामान्या पथिकैरूपभुज्यते।।३६।।**

**अन्वय:–** तया लक्ष्म्या किम् क्रियते? या केवला वधू: इव , सामान्या वेश्या इव या पथिकै: न उपभुज्यते।।३६।।

**अनुवाद–** उस लक्ष्मी से क्या किया जाए? जो केवल वधू के समान (स्थित रहती है) सामान्य वेश्या के समान जो पथिकों द्वारा भोगी नहीं जाती है।

**व्याकरण बोध: – क्रियते** = कृ + लट् लकार, आत्मने पद,प्रथम पुरूष, एकवचन। **उपभुज्यते**=उप + भुज् + लट् आत्मने पद,प्रथम पुरूष, एकवचन। **केवला** = केवल + टाप्। **सामान्या**= सामान्य + टाप्। **लक्ष्म्या** =तृतीया विभक्ति, एकवचन। **वधूरिव** = वधू: इव = विसर्ग सन्धि। **वेश्येव**= वेश्या इव = गुणसन्धि। **पथिकै:** = तृतीया विभक्ति, बहुवचन।

तथा च –

**अयं निज: परो वेति गणना लघुचेतसाम्।**
**उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।३७।।**

**अन्वय:–** अयं निज: पर: वा इति गणना लघुचेतसाम् (भवति) उदारचरितानाम् तु वसुधा एव कुटुम्बकम् (भवति)।। ३७।।

**अनुवाद–** 'यह अपना अथवा (यह) पराया है' इस प्रकार की गणना छोटे मन वाले लोगों की (होती है), उदारचरित वालों के लिए तो (सम्पूर्ण) पृथ्वी ही परिवार (होती है)।

**व्याकरण बोध :– वसुधैव** = वसुधा + एव = वृद्धिसन्धि। **उदाचरितानाम्** = षष्ठी विभक्ति, बहुवचन। **अयम्** = इदम् + प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **निज:** = नि + जन् + ड, पुल्लिंग, प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **लघुचेतसाम्** = लघु चेतो यस्य: स: (बहुव्रीहि) तेषाम्। **कुटुम्बकम्** = कुटुम्ब + अच + कन्। **वेति** = वा इति = गुण सन्धि। **वसुधैव**=वसुधा एव = वृद्धिसन्धि।

Scanned by CamScanner

तदागच्छत्वेषोऽपि इति।

तथाऽनुष्ठिते तैर्मार्गाश्रितैरटव्यां कतिचिदस्थीनि दृष्टानि। ततश्चैकेनाऽभिहितम्— अहो, अद्य विद्याप्रत्ययः क्रियते। किञ्चिदेतत्सत्त्वं मृतं तिष्ठति। तद् विद्याप्रभावेण जीवनसहितं कुर्मः। ततश्च तेनौत्सुक्यादस्थिसञ्चयः कृतः। द्वितीयेन चर्ममांसरूधिरं संयोजितम्। तृतीयोऽपि यावज्जीवनं सञ्चारयति तावत्सुबुद्धिना निषिद्धः—"भो, तिष्ठतु भवान्। एष सिंहो निष्पाद्यते, यद्येनं सजीवं करिष्यति ततः सर्वानपि व्यापादयिष्यति।"

इति तेनाऽभिहितः स आह —"धिङ्मूर्ख! नाऽहं विद्याया विफलतां करोमि।" ततस्तेनाऽभिहितम्—'तर्हि प्रतीक्षस्व क्षणं, यावदहं वृक्षमारोहामि।'

तथाऽनुष्ठिते, यावत्सजीवः कृतस्तावत्ते त्रयोऽपि सिंहेनोत्थाय व्यापादिताः। स च पुनर्वृक्षादवतीर्य, गृहं गतः।" अतोऽहं ब्रवीमि—'वरं बुद्धिर्न सा विद्या' इति। अत परमुक्तश्च सुवर्णसिद्धिना —

अनुवाद — इसलिए यह भी (हमारे साथ) आवे।

वैसा करने पर मार्ग में स्थित उन्हें जंगल में कुछ हड्डियाँ दिखाई दी। तब एक ने कहा — 'अरे! आज विद्या की परीक्षा कर ली जाए। यह कोई प्राणी मरा हुआ पड़ा है। तो (अपनी) विद्या के प्रभाव से (इसे) जीवित करते हैं। मैं हड्डियों को इकत्र करता हूँ और तब उसने उत्सुकतावश अस्थियों को इकट्ठा कर लिया। दूसरे ने (उसको) चर्म, मांस और रूधिर से संयुक्त कर दिया। तीसरा भी जब जीवन का संचार करने लगा तो (उसे) सुबुद्धि ने रोका— "अरे! आप ठहरिये। यह (तो) सिंह बनाया जा रहा है, यदि (आप) इसे जीवित कर देंगे तो (यह हम) सभी को मार डालेगा।"

उसके द्वारा इस प्रकार कहा गया वह बोला — " हे मूर्ख! (तम्हें) धिक्कार है। मैं (अपनी) विद्या को निष्फल नहीं करूँगा।" तब उसने कहा —"तो क्षणभर प्रतीक्षा करो, जब तक मैं वृक्ष पर चढ़ जाता हूँ।" (उसके) वैसा करने पर जैसे ही (उसे) जीवित किया गया, वंसे ही शेर ने उठकर (उन) तीनों को मार डाला और फिर वह वृक्ष से उतरकर घर चला गया। इसलिए मैं कहता हूँ — "बुद्धि श्रेष्ठ है, वह विद्या नहीं इत्यादि इसके पश्चात् सुवर्णसिद्धि ने कहा —

**अपि शास्त्रेषु कुशला लोकाचारविवर्जिताः।**
**सर्वे ते हास्यतां यान्ति, तथा ते मूर्खपण्डिताः।।३८।।**

**अन्वयः—** शास्त्रेणु कुशलाः अपि लोकाचारविवर्जिताः, ते सर्वे हास्यतां यान्ति, यथा ते मूर्खपण्डिताः ५।। ३८।

Scanned by CamScanner

अनुवाद– शास्त्रों में निपुण होते हुए भी लोकव्यवहार से शून्य वे सभी उपहास को प्राप्त होते हैं, जिस प्रकार वे मूर्खपण्डित बने थे।

**व्याकरण बोधः**– यान्ति = इण् + लट् लकार, प्रथम पुरूष, बहुवचन। **मूर्खपण्डिताः** = मूर्खः पण्डितः (कर्मधारय) ते। **लोकाचारविवर्जिताः** = लोकस्य आचारः (षष्ठी तत्पुरूष) लोकाचारः तस्मात् विवर्जित यः सः (बहुव्रीहि)। **ते** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **हास्यताम्**= हस् + ण्यत् + तल्,द्वितीया विभक्ति, एकवचन। **शास्त्रेणु** = सप्तमी विभक्ति, बहुवचन। **तै** =तत् शब्द, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **मूर्ख पण्डिताः** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **चक्रधर आह** =**''कथमेतत्?'' सोऽब्रतीत्** = (कस्मिंचिदधिष्ठाने कथा ५ )

अनुवाद –चक्रधर ने कहा – ''यह कैसे?'' स्वर्ण सिद्धि ने कहा –

## 5.मूर्खपण्डित - कथा

**कस्मिंश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणाः परस्परं मित्रत्वमापन्ना वसन्ति स्म। बालभावे तेषां मतिरजायत–''भोः! देशान्तरं गत्वा, विद्याया उपार्जनं क्रियते।''**

**अथान्यस्मिन्दिवसे ते ब्राह्मणाः परस्परं निश्चयं कृत्वा विद्योपार्जनार्थं कान्यकुब्जे गताः। तत्र च विद्यामठे गत्वा पठन्ति। एवं द्वादशाब्दानि यावदेकचित्ततया पठित्वा, विद्याकुशलास्ते सर्वे सञ्जाताः।**

**ततस्तैश्चतुर्भिर्मिलित्वोक्तम् – ''वयं सर्वविद्यापारङ्गताः। तदुपायायमुत्कलापयित्वा स्वदेशं गच्छामः। तथैवाऽनुष्ठीयतामित्युक्त्वा ब्राह्मण उपाध्यायमुत्कलापयित्वा, अनुज्ञां लब्ध्वा, पुस्तकानि नीत्वा, प्रचलिताः। यावत्किञ्चिन्मार्गं यान्ति, तावद् द्वौ पन्थानौ समायातौ। दृष्ट्वा उपविष्टाः सर्वे।**

अनुवाद– किसी स्थान पर आपस में मित्र रुप चार ब्राह्मण रहते थे। बाल्यावस्था में उनमें यह बुद्धि उत्पन्न हुई – '' अरे! दूसरे देश में जाकर विद्या का उपार्जन किया जाए।''

तब दूसरे दिन परस्पर निश्चय करके ये ब्राह्मण विद्या के उपार्जन हेतु कन्नौज गए तथा वहाँ पाठशाला में जाकर पढ़ने लगे। इस प्रकार बारह वर्षो तक एकाग्रचित्त से पढ़कर वे सभी विद्याओं में निपुण हो गये। तब उन चारों ने मिलकर कहा – ''हम सभी विद्याओं में निपुण (हो गए) हैं। तो गुरू जी को गुरूदक्षिणा देकर अपने देश को चलते हैं। ''वैसा ही कीजिए'' यह कहकर (वे सभी) ब्राह्मण गुरूजी को गुरूदक्षिणा देकर, (उनसे) अनुमति प्राप्त करके, (अपनी) पुस्तकें लेकर चल दिये। जैसे ही (ये) कुछ मार्ग चले तो दो मार्ग आ गये। (इसे) देखकर सभी बैठ गए।

Scanned by CamScanner
Scanned with CamScanner

तत्रैकः प्रोवाच — "केन मार्गेण गच्छामः?"

एतस्मिन्समये तस्मिन् पत्तने कश्चिद् वणिकपुत्रो मृतः। तस्य दाहाय महाजनो गतोऽभूत्। ततश्चतुर्णां मध्यादेकेन पुस्तकमवलोकितम् — "महाजनो येन गतः स पन्थाः" इति। तन्महाजनमार्गेण गच्छामः।

अथ ते पण्डिता यावन्महाजनमेलापकेन सह यान्ति, तावद्रासभः कश्चित्तत्र श्मशाने दृष्टः। अथ द्वितीयेन पुस्तकमुद्घाट्यावलोकितम् —

अनुवाद — (तब) वहाँ एक ने कहा — " किस मार्ग से चला जाए"? उसी समय नगर में कोई वणिक् पुत्र मर गया था। उसे जलाने के लिए महाजन लोग जा रहे थे। तब (उन) चारों में से एक ने पुस्तक (खोलकर) देखा — "महाजन श्रेष्ठ लोग जिस मार्ग में जाते हैं, वही मार्ग होता है। "तो (हम) महाजनों के मार्ग में चलते हैं।

इसके पश्चात् जब तक वे सभी पण्डित महाजनों के समूह के साथ चलते हैं, तब ही (उन्होने) वहाँ श्मशान में किसी गधे को देखा। तब दूसरे ने पुस्तक खोलकर देखा — (वहाँ लिखा था)।

**उत्सवे व्यसने प्राप्ते दुर्भिक्षे शत्रुसंकटे।**
**राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः॥३९॥**

**अन्वय**— उत्सवे व्यसने दुर्क्षिक्षे शत्रु संकटे च प्राप्ते राजद्वारे श्मशानं यः तिष्ठति स एव बान्धवः भवति।

**अनुवाद** — उत्वस में, आपत्ति आने पर, अकाल में, शत्रु के संकट में,राजसभा में तथा श्मशान में जो (साथ) रहता है, वही बन्धु है।

**व्याकरण बोधः** — **तिष्ठति** =स्था + लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **बान्धवः**= बन्धु + अण्, प्रथम पुरूष, एकवचन। **प्राप्ते** = प्र + आप् + क्त, सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **राजद्वारे** = राज्ञः द्वाराः, तस्मिन् (षष्ठी तत्पुरूष)। **उत्सवे** = उत् + सू + आप् सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **व्यसने**=वि+ अस् + ल्युट्, सप्तमी विभक्ति,एकवचन, नपुंसक लिंग। **राजद्वारे, श्मशाने, दुर्भिक्षे, शत्रुसंकटे** = सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **व्यसने**=वि +अस् + ल्युट्, सप्तमी विभक्ति एकवचन, नपुंसक लिंग। **राजद्वारे, श्मशाने, दुर्भिक्षे, शत्रुसंकटे** = सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **यस्तिष्ठति** = यः + तिष्ठति = विसर्ग सन्धि।

तदहो! अयमस्मदीयो बान्धवः। ततः कश्चित्तस्य ग्रीवायां लगति, कोऽपि पादौ प्रक्षालयति। अथ यावत्ते पण्डिताः दिशामवलोकनं कुर्वन्ति, तावत्कश्चिदुष्ट्रो दृष्टः तैश्चोक्तम् — "एतत्किम्?" तावत्तृतीयेन पुस्तकमुद्घाट्योक्तम् "धर्मस्य त्वरिता

Scanned by CamScanner

उष्ट्र – प्रसन्नता
ऊँट = धर्म



गतिः। तन्नूनमेव धर्मः तावचतुर्थेनोक्तम् ''इष्टं धर्मेण योजयेत्।'' अथ तैश्च रासभ उष्ट्रग्रीवायां बद्धः। तत्तु केनचित्तत्स्वामिनं रजकस्याग्रे कथितम्। यावद्रजकस्तेषां मूर्खपण्डितानां प्रहारकरणाय समायातस्तावत्ते प्रनष्टाः।

ततो तावदग्रे किञ्चित्स्तोकं मार्गं यान्ति तावत्काचिन्नदी समासादिता। तस्या जलमध्ये पलाशपत्रमायात दृष्ट्वा पण्डितेनैकेनोक्तम् =

''आगमिष्यति यत्पत्रं तदस्मांस्तारयिष्यति'' – एतत्कथयित्वा तत्पत्रस्योपरि पतितो यावन्नद्या नीयते, तावत्तं नीयमानमवलोक्याऽन्येन पण्डितेन केशान्तं गृहीत्वोक्तम्।

अनुवाद– तो प्रसन्नता है! यह हमारा भाई है। तब कोई उसके गले लगने लगा, (तथा) कोई पैर धोने लगा। इसके पश्चात् जब तक उन पण्डितों ने दिशाओं में देखा तो (उन्हे) कोई ऊँट दिखायी दिया, तब उन्होंने कहा – 'यह क्या है?'

जब तीसरे ने पुस्तक खोलकर कहा – ''धर्म की गति तेज होती है।'' इसलिए निश्चय ही यह धर्म है। तब चौथे ने कहा – ''बन्धु को धर्म से मिलना चाहिए।''

और इसके बाद उन सबने गधे को ऊँट की गर्दन से बाँध दिया, किन्त तभी किसी ने वह (समाचार) उस (गधे) के स्वामी धोबी के सामने कह दिया। जब तक धोबी उन मूर्ख पण्डितों को मारने के लिए आया, तब तक वे सभी भाग गये।

तत्पश्चात् जैसे (ही वे सब) आगे कुछ थोड़ा–सा मार्ग चलते हैं, तब तक कोई नदी आ गई। उसके जल के बीच आते हुए पलाश के पत्ते को देखकर एक पण्डित ने कहा ' जो पत्ता आ रहा है वह हम सभी को पार उतार देगा, यह कहकर उस पत्ते के ऊपर गिरा हुआ (वह) जब तक नदी द्वारा (बहाकर) ले जाया जा रहा था, तब ले जाए जाते हुए उसको देखकर बालों के छोर को पकड़कर दूसरे पण्डित ने कहा –

**सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः।**
**अर्धेन कुरूते कार्यं, सर्वनाशो हि दुःसहः।।४०।।**

**अन्वयः**– पण्डितः सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धम् त्यजति, अर्धेन (वै) कार्यं कुरूते हि सर्वनाशः दुःसहः (भवति)।।४०।।

**अनुवाद**– बुद्धिमान व्यक्ति पूर्णरूप से विनाश की (स्थिति) उत्पन्न होने पर आधा छोड़ देता है (और) आधे से (ही अपना) काम चलाता है, क्योंकि सर्वनाश सहन करना अत्यधिक कठिन होता है।

**व्याकरण बोध :**– त्यजति = त्यज् +लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **सर्वनाशे** = सर्वेषां नाशः (षष्ठी तत्पुरूष) तस्मिन्। **कुरूते** = कृ + लट् लकार,आत्मने पद, प्रथम पुरूष,

Scanned by CamScanner
Scanned with CamScanner

एकवचन। पण्डितः = पण्डा + इतच्, प्रथमा विभक्ति, एकवचन। समुत्पन्ने = सम् + उत् + पत् + क्त, सप्तमी विभक्ति, एकवचन।

इत्युक्त्वा तस्य शिरच्छेदो विहितः।

अथ तैश्च पश्चाद् गत्वा कश्चिद् ग्राम आसादितः। तेऽपि ग्रामाणैर्निमन्त्रिताः पृथक् – पृथग्गृहेषु नीताः। ततः एकस्य सूत्रिका घृतखण्डसंयुक्ता भोजने दत्ता। तन्नो विचिन्त्य पण्डितेनोक्तं यत्–"दीर्घसूत्री विनश्यति"। एवमुक्ता भोजनं परित्यज्य गतः। तथा द्वितीयस्य मण्डका दत्ताः। तेनाऽप्युक्तम्–"अतिविस्तारवितीर्णं।

तद्भवेत्र चिरायुषम्"। स च भोजनं त्यक्त्वा गतः। अथ तृतीयस्य वाटिकाभोजने दत्तम्। तत्राऽपि तेन पण्डितेनोक्तम्– "छिद्रष्वनर्था बहुलीभवन्ति"। ते त्रयोऽपि पण्डिताः क्षुत्क्षामकण्ठा लोकैर्हास्यमानास्ततः स्थानात् स्वदेशं गता।"

अनुवाद – इस प्रकार कहकर उसका सिर काट लिया। इसके पश्चात् आगे चलने पर उन्हें कोई गाँव मिला। गाँव वालों के द्वारा आमन्त्रित हुए वे सभी अलग – अलग घरों में ले जाए गए। तब (वहाँ) एक को भोजन में घी और खाण्ड से मिली सिवईं दी गई। तब सोचकर पण्डित ने कहा कि – दीर्घसूत्री' नष्ट हो जाता है। इस प्रकार कहकर भोजन का परित्याग करके चला गया। उसी प्रकार दूसरे को (भोजन में) फुलके (रोटी) दिये गए। उसने भी कहा – "अत्यधिक विस्तार में फैला हुआ आयु को बढाने वाला नहीं होता है" और वह (भी) भोजन छोड़कर चला गया। तब तीसरे को बड़ा दिया गया। वहाँ भी उस पण्डित ने कहा – "छिद्रों में बहुत से अनर्थ होते हैं।" इस प्रकार लोगों के द्वारा उपहास किए जाते हुए भूख से दुर्बल कण्ठ वाले, वे तीनों ही पण्डित, उस स्थान से अपने देश को चले गए।

अथ सुर्वणसिद्धिराह –"यत्त्वं लोकव्यवहारमजानन्मया वार्यमाणोऽपि न स्थितः, तत ईदृशीमवस्थामुपगतः। अतोऽहं ब्रवीमि –"अपि शास्त्रेषु कुशलाः" इति।

तच्छ्रुत्वा चक्रधर आह –"अहो, अकारणमेतत् यतो हि –

अनुवाद– इसके बाद सुवर्णसिद्धि बोला – लोकव्यवहार को जानते हुए, मेरे द्वारा रोके जाते हुए भी, जो तुम नहीं रूके, तभी ऐसी दशा को प्राप्त हुए हो। इसलिए मैं कहता हूँ– 'शास्त्रों में निपुण होते हुए भी' इत्यादि। उसे सुनकर चक्रधर बोला – 'अरे! यह तो व्यर्थ की बात है' क्योकि –

Scanned by CamScanner

**सुबुद्धयो विनश्यन्ति दुष्टदैवेन नाशिताः।**
**स्वल्पधीरपि तस्मिंस्तु कुले नन्दति सन्ततम्।। ४१ ।।**

**अन्वयः–** दुष्टदैवेन नाशिताः सुबुद्धयः (अपि) विनश्यन्ति, तु तस्मिन् कुले स्वल्पधीः अपि सन्ततम् नन्दति।। ४२।।

**अनुवाद–** भाग्य के विपरीत होने पर श्रेष्ठ बुद्धि वाले लोग भी कष्ट उठाते हैं, किन्तु उसी कुल में अत्यल्प बुद्धियुक्त (व्यक्ति) भी आनन्दित रहता है।

**व्याकरण बोध :– नाशिताः** = नश् + णिच् + क्त। **दुष्टदैवेन** = दुष्टः दैवः (कर्म–धारय) तेन, तृतीया विभक्ति, एकवचन। **सुबुद्धयः** = श्रेष्ठा बुद्धिः येषां ते (बहुव्रीहि), प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **विनश्यन्ति** = वि + नश् + लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन दिवादिगण। **नन्दति** = नन्द् + लट् लकार, प्रथमा विभक्ति, एकवचन। **सुबुद्धय**= प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। **स्वल्पधीरपि** = स्वल्पधीः + अपि= विसर्गसन्धि। **कुले** = सप्तमी विभक्ति, एकवचन।

**अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं,**
**सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति।**
**जीवत्यनाथोऽपि वने विसर्जितः**
**कृतप्रयत्नोऽपि गृहे न जीवति।।४२।।**

**अन्वय–** दैवरक्षितम् अरक्षितम् (अपि) तिष्ठति, सुरक्षितम् (अपि) दैवहतम विनश्यति (यतः) वने विसर्जितः अनाथः अपि जीवति, कृत – प्रयत्नः अपि गृहे न जीवति।।४२।।

**अनुवाद–** कहा भी गया है –

भाग्य द्वारा रक्षा किया गया पुरुष, न रक्षा किये जाने भी जीवित रहता है, सुरक्षा किया गया (भी) भाग्य द्वारा (व्यक्ति) नष्ट हो जाता है। (क्योंकि) वन में छोड़ा गया अनाथ (व्यक्ति) भी जीवित रहता है (तथा) प्रयत्नपूर्वक (सुरक्षा) किया गया (वह) घर पर भी जीवित नहीं रहता है।

**व्याकरण बोध :– अरक्षितम्** = न रक्षितम्, इति (नञ् समास)। **सुरक्षितम्** = सु + रक्ष् + क्त। **विसर्जितः**= वि + सृज् + क्त। **जीवति** = जीव् + क्त। **कृतप्रयत्नः** = कृतं प्रयत्नं यस्मै सः (बहुव्रीहि)। **दैवरक्षितम्** = दैवेन रक्षितम् (तृतीया तत्पुरूष)। **तिष्ठति** = स्था + लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन। **दैवहतम्** = दैवेन हतम् (तृतीया तत्पुरूष)। हन + क्त। **जीवत्यनाथः** = जीवति अनाथ = यण सन्धि। **गृहे** =सप्तमी विभक्ति, एकवचन। **विनश्यति** =लट् लकार, प्रथम पुरूष, एकवचन।

Scanned by CamScanner

**शतबुद्धिः शिरस्थोऽयं लम्बते च सहस्त्रधीः।**

**एकबुद्धिरहं भद्रे! क्रीडामि विमले जले।।४३।।**

**अन्वयः–** अयम शतबुद्धिः शिरस्थः च सहस्त्रधीः लम्बते, (किन्तु) भद्रे! एकबुद्धिः अहं विमले जले क्रीडामि।। ४३।।

**अनुवाद –** और भी – यह शतबुद्धि सिर पर स्थित है तथा सहस्त्रधीः लटका हुआ है, (किन्तु) हे प्रिये! एकबुद्धि वाला मैं स्वच्छ में क्रीड़ा कर रहा हूँ।

**व्याकरण बोधः– शिरस्थः** – शिरसि स्थितः (सप्तमी तत्पुरूष)। **लम्बते** – लम्ब् + लट् लकार, प्रथम पुरूष एकवचन, आत्मने पद। **क्रीडामि** – क्रीड् + लट् लकार, उत्तम पुरूष एकवचन। **एकबुद्धिः** – एका सामान्या बुद्धिः यस्य सः (बहुव्रीहि)। **एकबुद्धिरहं** – एकबुद्धिः अहम् = विसर्ग सन्धि। सुवर्णसिद्धिराह – "कथमेतत्?"

**अनुवाद–** सुवर्णसिद्धि बोला – "यह कैसे?"

**इति समाप्तः**

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner